स्वाध्याय सुधा

रचना कर्ता

गणेशमल दूगड़ "विशारद"

•

प्रकाशक

सागर टैक्सटाइल मिल्स, प्राइवेट लि०

६८, न्यू क्लाथ मार्केट

अहमदाबाद

पूज्य माता जी श्री मूगा देवी

समर्पण

जिनके ऋण से हम कभी उऋण नहीं हो सकते

उन

पूज्य माताजी श्री भूरी देवी

के

चरणों में

पूज्य श्री माताजी
का
जीवन-परिचय

—०—

पूज्य श्री माता जी का जन्म सवत् १६४८ की कार्तिक शुक्ला द्वितीया को चूरु (राजस्थान) मे श्रीमज्जयाचार्य की शिष्या महासती श्री सरदाराजी के पितृपक्षीय कोठारी परिवार मे हुआ। आपके पूज्य दादाजी का नाम श्री चांदमलजी और पूज्य पिताजी का नाम श्री जवरीमलजी था। ये श्री जतरूपजी कोठारी के वशज थे।

पूज्य माताजी की उम्र जब केवल नौ वर्ष की थी तब ही आपकी माताजी का स्वर्गवास हो गया। अत आपके दादाजी श्री चांदमलजी के भाई श्री करमचन्द जी और उनकी पत्नी ने बडे लाड प्यार से आपका पालन पोषण किया।

कुल की परम्पराओ एव तात्कालिक परिस्थितियो के अनुकूल आपका जीवन निर्माण हुआ। महासती श्री सरदाराजी के जीवनवृत्त ने आपके मानस मे धर्म-श्रद्धा की नीव डाली, और कुल क्रमागत वैभव एव बडप्पन की बातो ने विशालता का बीजारोपण किया। मा के वियोग ने कर्त्तव्य का भान शीघ्र करवाया और गृह-कार्य मे कुशल बनाया। सहेलियो ने साक्षर

बनाया और पुराने कपडो की काट-छाट ने सिलाई का ज्ञान दिया। आपने 'भूरीबाई' नाम के साथ साथ भूरि भूरि गुणो को अपनाया। विनय और स्नेह स्वभाव आपको सीखना नही पडा, क्योकि ये दोनो गुण जन्मजात ही थे।

गृहस्थाश्रम मे प्रवेश

स० १६५६ के वैशाख वदी द्वादशी के दिन आपका शुभ पाणिग्रहण सरदार शहर निवासी श्री सागरमलजी दूगड' के साथ हुआ। विनय और सेवाभाव की विशेषता से आप शीघ्र ही अपने सासू और ससुर की कृपा-पात्र बन गई। सासू तथा दादीसासू के मुख से और मन मे आपको सदा सुखी बनने का शुभाशीर्वाद मिलता रहा। परिवार वालो से हिल मिल कर रहना पडोसियो को सम्मान देना तथा पति की आज्ञा और सेवा का पूरा पूरा ध्यान रखना ये आपके जीवन के मूल-मन्त्र बन गये।

कसौटी-काल

पूज्य पिताजी एक धर्मनिष्ठ, सत्यप्रिय विवेकशील एव परोपकारी व्यक्ति थे। समाज मे उनका अच्छा सम्मान था। किन्तु ३६ वर्ष की अल्पायु मे ही आपका स्वर्गवास हो गया। आप अपने पीछे तीन लडके* और एक लडकी† छोड गये।

*(१) सरूपचन्द (२) शुभकरन, (३) गणेशमल,
† केसर बाई।

इस असामयिक घटना ने पूज्य माता जी का जीवन-स्वर्ण तपा कर और अधिक चमका दिया। यद्यपि आप पहले से ही धर्मप्रधान थी, किन्तु बाद में तो धर्ममूर्ति ही बन गई।

अनमोल शिक्षायें

पूज्य माताजी के पास बालकों को योग्य बनाने की वात्सल्य और अनुशासन भरी एक विशिष्ट पद्धति थी। हम (भाई-बहनों को) शिक्षा देती और कहती 'विनयी बनना' क्योंकि आपणो धर्म भी विनयमूल है।

भाइयों भाइयों का कुछ लडत झगडत देख कर कहती कि 'लडयां कर है के भाई जिसा भाई कठ पड़या है।

सबसे अधिक सतर्कता इस प्रसंग पर बरतती कि बालकों की संगति कैसी है ? और कहती— जिसी संगत हुव विसी बुद्धि आव।

अपने यहां आये हुए अतिथि का सत्कार तो करते ही हैं किन्तु एक बार अपना दुश्मन भी यदि घर आ जाय तो उसका भी आदर करना चाहिए और कहती— वरी र आदर सार।

किसी से कुछ लेना हो या काम निकलवाना हो तो नम्रता से पेश आना चाहिये, और कहती— आप री नरमा पर न खाव।'

साधु-सन्तों की सदा शुश्रूषा करनी चाहिये यदि वह अपने से न बन पाये तो कम से-कम किसी सन्त को सताना

तो नही ही चाहिये । इस पर महासता श्री सरदारजी के पीहर वालो का उदाहरण देकर कहती—'साध मताया जान है नाम ठाम और वरा' ।

ऐसी ऐसी अनेक अमूल्य शिक्षाए देकर अपने बालको के जीवन निर्माण के साथ परोक्षतया समाज और देश का भला करती ।

मुझे यह कहते गौरव का अनुभव हो रहा है, कि आज हम भाई-बहनो म जो स्नेह है और हम जो कुछ भी योग्य बने हैं यह सारा पूज्य माता जी की सत्शिक्षा का ही परिणाम है ।

धर्मानुराग और कुछ विशेषताएँ

श्री जैन श्वेताम्बर तेरापथ तथा श्री आचार्यदेव एव साधु साध्वियो म आपकी अटल श्रद्धा और भक्ति है । स्व० साध्वी श्री भीखाजी आपकी भुवा सासू थी और वर्तमान साध्वी श्रीधन कवरजी आपका ससार पक्षीय पुत्र वधू तथा साध्वी श्री कमलू जी (सरदारशहर) आपकी पोती हैं । शासन म यह अपना सीर (सक्रिय हिस्सा) समझ कर अपने आपको धन्य मानती हैं। साधु-संगति से सदा लाभ होता है यह आपका पूर्ण विश्वास है । पिछले पच्चीस वर्षो से प्राय प्रति वर्ष एक महीना आचार्य श्री की सेवा और सत्सग म बिताती है । वहा हमम से भी किसी एक को साथ रखती है कि जिससे हमारे धार्मिक सस्कार सुदृढ

हो जाय। त्याग और संयम में आपकी प्रवृत्ति है और स्वाध्याय में सहज रुचि। दान और भावना का विशेष गुण है। आप कठिन समय में भी शान्त और स्थिरचित्त रह सकती हैं। पर-निन्दा और चुगली करना आपको बिलकुल नहीं सुहाता।

धार्मिक ज्ञान की अभिरुचि

(निम्नलिखित थोकड़े आदि कण्ठस्थ हैं)

(१) पंच पद-वन्दना (२) पच्चीस बोल (३) जाणपणे का पच्चीस बोल (४) पाना की चर्चा (५) तेरह द्वार (६) लघु दण्डक (७) महा दण्डक (८) गण्डा जोग (९) भुवण द्वार (१०) इक्कीस द्वार (११) संजया (१२) नियंठा (१३) गमा (१४) कर्म प्रकृति (१५) लेश्या (१६) इक्कतीसा (१७) कमचन्दजी स्वामी कृत ध्यान (१८) हरखचन्द स्वामी कृत चर्चा (१९) हुँडी लूणजी की (२०) हुँडी पाच सौ बोल की (२१) सात सौ गाथा की लब्धा (२२) आत्मध्यान को थोकड़ो (२३) साधु आराधना (२४) श्रावक आराधना (२५) चारोंगी जयाचार्य कृत (२६) साधु-वन्दना (३०० गाथा की) (२७) साधु-वन्दना (१०० गाथा की) (२८) बावीस परिषहा की २२ ढाला (२९) फुटकर उपदेश की ढाल और आचार्य गुणकीर्तन की अनेक गीतिकाएँ।

संयम की साधना

(निम्नांकित व्रत लिये हुए हैं)

(१) जीवन-पर्यन्त तिविहार रखना।

(२) जीवन पयन्त हरी लीलोती नही खाना ।

(३) जीवन पयन्त कच्चा पानी नही पीना ।

(४) जीवन पयन्त १०० द्रव्य उपरान्त प्रयोग नही करना ।

(५) जीवन पयन्त एक सामायक किये बिना अन्न जल नही लेना ।

(६) जीवन पयन्त अणुव्रतो का पालन करना ।

अभी आप की ७६ वष की उम्र है । आप पोते पोतियो, दोहिते और दोहितियां व परिवार मे परिवृत और सुखी हैं । आपके पुत्रो का व्यापार अहमदाबाद म होने से आप अधिकतर वही रहती हैं । सागर टेक्सटाइल मिल्स प्रा० लि० आप ही की है । लेकिन आज भी ग पक्षा नित्य कुछ न कुछ नई ढाल और थोकडे आदि कण्ठस्थ करती हुई देरासर मे धार्म्य-यान्वित हैं और सोचता हू कि पूज्य माताजी का जीवन हमारे लिये पवित्र प्ररणाप्रद और कमण्यता का सजीव इतिहास है ।

पूज्य माताजी की धार्मिक वृत्ति और धम प्रचार की भावना को देखकर प्रस्तुत पुस्तक स्वाध्याय-सुधा का सङ्कलन किया गया है । यदि तत्त्व जिज्ञासु और स्वाध्याय प्रेमियो को इसमे कुछ लाभ पहुचा तो निश्चय ही मैं कृतार्थ होऊँगा ।

निवेदक —

गणेशमल दुगड़ 'विशारद'

अपनी ओर से

धार्मिक जगत में अनेक ग्रन्थ सम्प्रदायों के आधार पर प्रकाशित होने वाला साहित्य बहुत है, किन्तु इस 'स्वाध्याय-सुधा' के संकलन में पाठक स्वयं समझ सकेंगे कि वेदमन्त्रों के सूक्त, गीता में आये हुए सिद्धान्त के द्वारा भाषा से सरल और भावों से पूर्ण कबीर आदि सन्तों तथा सद्गृहस्थों के भजन एवं सर्वधर्म सम्प्रदायों के मत, प्रार्थना और सिद्धान्तों का समावेश असाम्प्रदायिकता की ओर प्रचार कर रहे हैं।

इसमें भाषा की दृष्टि से अर्द्धमागधी, अपभ्रंश, सिन्धी, पंजाबी, उर्दू, गुजराती, राजस्थानी, हिन्दी आदि का उद्धरण नाना प्रान्तीयता का अभाव बतलाता हुआ भिन्न भिन्न रुचियों का एकीकरण करने का प्रयास करता हुआ मिलेगी।

भावों की दृष्टि से प्रत्येक कविता का प्रत्येक पद और प्रत्येक शब्द भारत की प्राचीनतम आध्यात्मिक संस्कृति की ओर मुमुक्षु के लिये जन मानस को पुनः उधर प्रेरित करते मिलेंगे।

अन्त में आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास करता हूँ कि यह 'स्वाध्याय-सुधा' का संकलन अपने आप में निराला होता हुआ विशेष लोकप्रिय बनेगा। इस विचार विश्वबन्धुत्व की ओर प्रेरित करने के सत्प्रयत्न के लिये संकलनकर्ता एवं प्रकाशक अवश्य ही धन्यवाद के पात्र हैं।

डॉ० पुष्पराज "ब्रह्मचारी"

—सम्पादक

शुद्धाशुद्धि पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१७	२१	बिल्लभ	वल्लभ
१८	३	नमू मन मन मोहन	नमू मन मोहन
२४	३	प्रमु	प्रभु
२५	२४	"तुलसी इक के	तुलसी के इक
२७	८	शीलवली	शीलवन्ती
३२	१३	कर	कम
४०	५	पनसी	तपसी
४५	१०	इगति	इंगित
४६	११	पमा	धर्म
५०	२५	एकारग	एकाग्र
५१	१५	भरी	भारी
५४	४	मन	भरे
५५	६	अहि	अहि
५५	२१	तव है	तव हो
५७	१६	मनचित	समचित
६६	२०	नागो है का	नोगा गो के
६७	१७	वपन	विपय
६७	१८	निएस	निराग्र्यू
६८	१२	ओभ	क्षोभ
७१	१८	महरयो	म्यू हारयो
८०	१४	अथगार	अणगार
८४	८	कारति	कीर्ति
९४	१६	मेन रे	तेने रे
९५	११	विखद्य	निरवद्य
९८	१	थणी	थणो

निर्देशिका

श्री सरस्वती वन्दना

—०—

या कुन्देन्दु तुषार हारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता,
या वीणा वरदण्ड मण्डितकरा या श्वेत पद्मासना ।
या ब्रह्माऽच्युत शंकर प्रभृतिभिर्देवै सदा वन्दिता,
सा मा पातु सरस्वती भगवती नि शेष जाड्यापहा ।।

नवकार महामन्त्र

णमो अरिहंताण ।
णमो सिद्धाण ।।
णमो आयरियाण ।
णमो उवज्झायाण ।।
णमो लोए सव्व साहूण ।

नवकार (छन्द)

सुख कारण भवियण समरो श्री नवकार ।
जिन शासन आगम, चौदह पूरव नो सार ।। १ ।।
इण मन्त्र नी महिमा, कहता न लहूँ पार ।
सुरतरु जिम चिंतित, वंछित फल दातार ।।२ ।।
सुर दानव मानव, सेवा कर कर जोड ।
भू मण्डल विचरे तारे भवियण कोड ।। ३ ।।
सुर छन्दे विलसे, अतिशय जास अनन्त ।
पद पहले नमिये, अरि-गजन अरिहन्त ।। ४ ।।
जे पनरे भेदे सिद्ध थया भगवन्त ।
पचमी गति पहुँता, अष्ट कर्म करि अन्त ।। ५ ।।
कल अकल सरूपी पचानन्तक देह ।
सिद्ध ना पाय प्रणमूं बीजे पद वलि एह ।। ६ ।।

गच्छ भार धुरंधर, गुन्दर नासिहर नाम।
करि गारण वारण गुण छतीसे धाम॥ ७॥
श्रुत जाण शिरोमणि सागर जिम गम्भीर।
तीजै पद प्रणमूं आचारज गुण धीर॥ ८॥
श्रुतधर गुण आगर सूत्र भणाय सार।
तप विधि संजोग भारा अथ विचार॥ ६॥
मुनिवर गुण युक्ता ते कहिये उवज्झाय।
चौथे पद नमिये अहो निशि तेहना पाय॥ १०॥
पंच आश्रव टाले, पाले पंचाचार।
तपगी गुणधारी, वारे विषय विकार॥ ११॥
त्रस थावर पीहर, लोक माहि जे साध।
त्रिविधे ते प्रणमूं परमारथ करि लाध॥ १२॥
अरि हरि करि सायण, डायण भूत वैताल।
सहु पाप पणासे थाम्ये मंगल माल॥ १३॥
इण समरयाँ संकट दूर टले तत्काल।
जप इम जिनप्रभ सूरि शिष्य रसाल॥ १४॥

पंचपरमेष्ठी मंगल

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र महिता सिद्धाश्च सिद्धिस्थिता
आचार्या जिन शासनोन्नतिकरा पूज्या उपाध्यायका
श्री सिद्धान्त सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका
पंचैते परमेष्ठिन प्रतिदिनं कुर्वन्तु मे मंगलम्॥

मगल गान

तज—धम की जय हो जय ।

श्रद्धा विनय समेत, णमो अरिहताण ।
प्राजल पणत सचेत, णमो अरिहताण ।। ध्रुवपद ।
आध्यात्मिक-पथ के अधिनेता ।
वीतराग प्रभु विश्व विजेता ।
शरच्चन्द्र सम श्वेत, णमो अरिहताण ।। १ ।।
अक्षय अरुज अनत अचल जो ।
अटल अरूप स्वरूप अमल जो ।
अजरामर अद्वैत, णमो सिद्धाण ।। २ ।।
धम-सघ के जो सवाहक ।
निमल धर्म-नीति निर्वाहक ।
शासन म समवेत णमो आयरियाण ।। ३ ।।
आगम अध्यापन मे अधिकृत ।
विमल कमल सम जीवन अविकृत ।
शम सयम समुपेत, णमो उवज्झायाण ।। ४ ।।
आत्म साधना लीन अनवरत ।
विषय वासनाओ से उपरत ।
तुलसी है अनिकेत, णमो लोए सव्व साहूण ।। ५ ।।

अनुपूर्वी

(१)

१	२	३	४	५
२	१	३	४	५
१	३	२	४	५
३	१	२	६	५
२	३	१	४	५
३	२	१	४	५

(२)

१	२	४	३	५
२	१	४	३	५
१	४	२	३	५
४	१	२	३	५
२	४	१	३	५
४	२	१	३	५

(३)

१	३	४	२	५
३	१	४	२	५
१	४	३	२	५
४	१	३	२	५
३	४	१	२	५
४	३	१	[illegible]	[illegible]

(४)

२	३	४	१	५
३	२	४	१	५
२	४	३	१	५
६	२	३	१	५
३	४	२	१	५
४	३	२	१	[illegible]

(५)

१	२	३	५	४
२	१	३	५	४
१	३	२	५	४
३	१	२	५	४
२	३	१	५	४
३	२	१	५	४

(६)

१	२	५	३	४
२	१	५	३	४
१	५	२	३	४
५	१	२	३	४
२	५	१	३	४
५	२	१	३	४

(७)

१	३	५	२	४
३	१	५	३	४
१	५	३	२	४
५	१	३	२	४
३	५	१	२	४
५	३	१	२	४

(८)

२	३	५	१	४
३	२	५	१	४
२	५	३	१	४
५	२	३	१	४
३	५	२	१	४
५	३	२	१	४

(१३)

१	३	४	५	२
३	१	४	५	२
१	४	३	५	२
४	१	३	५	२
३	४	१	५	२
४	३	१	५	२

(१४)

१	३	५	४	२
३	१	५	४	२
१	५	३	४	२
५	१	३	४	२
३	५	१	४	२
५	३	१	४	२

(१५)

१	४	५	३	२
४	१	५	३	२
१	५	४	३	२
५	१	४	३	२
४	५	१	३	२
५	४	१	३	२

(१६)

३	४	५	१	२
४	३	५	१	२
३	५	४	१	२
५	३	४	१	२
४	५	३	१	२
५	४	३	१	२

(१७)

२	३	४	५	१
३	२	४	५	१
२	४	३	५	१
४	२	३	५	१
३	४	२	५	१
४	३	२	५	१

(१८)

२	३	५	४	१
३	२	५	४	१
२	५	३	४	१
५	२	३	४	१
३	५	२	४	१
५	३	२	४	१

(१९)

२	४	५	३	१
४	२	५	३	१
२	५	४	३	१
५	२	४	३	१
४	५	२	३	१
५	४	२	३	१

(२०)

३	४	५	२	१
४	३	५	२	१
३	५	४	२	१
५	३	४	२	१
४	५	३	२	१
५	४	३	२	१

अनुपूर्वी गिनने की विधि

जहाँ १ है वहाँ णमो अरिहन्ताण बोलना ।
जहाँ २ है वहाँ णमो सिद्धाण बोलना ।
जहाँ ३ है वहाँ णमो आयरियाण बोलना ।
जहाँ ४ है वहा णमो उवज्झायाण बोलना ।
जहाँ ५ है वहाँ णमो लोए सव्व साहूण बोलना ।

अनुपूर्वी गिनने का फल

अनूपूर्वी गणज्यो जोय छवमासी तप नु फल होय ।
स देह नव आणा लिगार निमल मने जपो नवकार ॥१॥

शुद्ध वस्त्रे धरी विवेक दिन दिन प्रत्ये गणवी एक ।
एम अनुपूर्वी जे गणे त पाचसा मागर ना पाप हणे ॥२॥

अशुभ कम के हरण कू म त्र बडा नवकार ।
वाणी द्वादश अङ्ग म देख लियो त त सार ॥३॥

मगल पाठ

चत्तारि मगलं

अरिहन्ता मगल सिद्धा मगल ।
साहू मगल केवली पन्नतो धम्मो मगल ॥

चत्तारि लोगुत्तमा

अरिहन्ता लोगुत्तमा सिद्धा लोगुत्तमा ।
साहू लोगुत्तमा, केवली पन्नत्तोधम्मो लोगुत्तमा ॥

चत्तारि सरणं पवज्जामि

अरिहन्ते सरण पवज्जामि सिद्धे सरण पवज्जामि ।
साहू सरण पवज्जामि केवली पन्नत्त धम्म सरण पवज्जामि ॥

॥ दोहा ॥

ए च्यारू सरणा सगा, अवर सगा नहि कोय ।
जे भवि प्राणी आदरे, अजर अमर पद होय ॥

लोगस्स

लोगस्स उज्जोयगरे, धम्मतित्थयरे जिणे ।
अरिहन्ते कित्तइस्सं, चउव्वीसंपि केवली ।। १ ।।
उसभमजियं च वन्दे, संभवमभिनन्दणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चन्दप्पहं वन्दे ।। २ ।।
सुविहिं च पुप्फदन्तं, सीयल सिज्जंसवासुपुज्जं च ।
विमलं मणंतं च जिणं, धम्मं सन्तिं च वन्दामि ।। ३ ।।
कुंथुं अरं च मल्लिं, वन्दे मुणि सुव्वयं नमिं जिणं च ।
वन्दामि रिट्ठनेमिं, पासं तहं वद्धमाणं च ।। ४ ।।
एवं मए अभिथुया, विहूयरयमला पहीण जर मरणा ।
चउव्वीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयन्तु ।। ५ ।।
कित्तिय-वन्दिय महिया, जे ए लोगस्स उत्तमा सिद्धा ।
आरुग्ग बोहिलाभं, समाहिवर मुत्तमं दिन्तु ।। ६ ।।
चन्देसु निम्मलयरा, आइच्चेसु अहियं पयासयरा ।
सागरवर गम्भीरा, सिद्धा सिद्धिं मम दिसन्तु ।। ७ ।।

पैंसठियो

यन्त्र और ढाल

२२	३	९	१५	१६
१४	२०	२१	२	८
१	७	१३	१९	२५
१८	२४	५	६	१२
१०	११	१७	२३	४

श्री नमीश्वर, सम्भव, स्याम,
सुविधि, धर्म, शान्ति अभिराम।
अनन्त सुव्रत, नमिनाथ, सुजान,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ॥१॥

अजितनाथ चन्द्राप्रभु धीर,
आदीश्वर, सुपार्श्व गम्भीर।
विमलनाथ, विमल यश भान,
वर मुझ करो कल्याण ॥

मल्लिनाथ जिन मंगल रूप,
धनुष पचीसी सुंदर स्वरूप।
श्री अरनाथ प्रणमूं वर्द्धमान,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ।।३।।

सुमति पद्मप्रभु अवतंस
वासुपूज्य शीतल श्रेयांस।
कुंथु पारस अभिनन्दन जान,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ।।४।।

इण पर श्री जिनवर सम्भारिये,
दुख दारिद्र विघ्न निवारिये।
पच्चीसे पसठ परिमाण,
श्रीजिनवर मुझ करो कल्याण ।।५।।

इण भणता दुख न आवे कदा,
जो निज पास राखे सदा।
धरिये पंच तणा मन ध्यान,
श्रीजिनवर मुझ करो कल्याण ।।६।।

श्री जिनवर नामे वंछित मिले
मन वंछित सहु आशा फले।
धर्मसिंह मुनिवर भाव प्रधान,
श्री निजवर मुझ करो कल्याण ।।७।।

जैन-धर्म की ज्योति

तर्ज — अखियाना लिए रहा हूँ ।

जय जैन धर्म की ज्योति जगमगाती हो रही ।
जिसकी अपना पर जाना जड़ता जड़ मूल रही ॥
मिति में सव्य भुवन् वर सज्जन न धर्माई ।
यह मूल मन्त्र ममता का जिस अहिंसा जैन कहे ॥१॥

मुनियों हित पंच महाव्रत अणुव्रत गार्हस्थ्य में ।
दुविध धर्म पनत जो जैसा शक्ति लहे ॥२॥
आत्मा सुख दुख की कर्ता क्या काम राम का ।
है अलख दुर्लभ सब अपने कृत कर्म सहे ॥३॥

सत्करणी सब की अच्छी जैनेतर जन क्या ?
कहे जिनवर बाल तपस्वी भी दयाराहए ॥४॥
है विश्व अनन्त अनादि, परिवर्तन रूप में ।
फिर स्रष्टा क्या सरजेगा जब लोग सासए ॥५॥

पुरुषार्थी बनो सु प्यारे जो होना होने दो ।
दमितात्मा सदा सुखी है 'अस्मि लोए परत्थए' ॥६॥
आत्मा लहे परब्रह्म पद, हद होत विकास की ।
नव तत्त्व द्रव्य षट घटना 'सम्मदिट्ठी सद्दहे' ॥७॥
सिद्धान्त समन्वयवादी, स्याद्वादी का सत्य ।
अथाग्रह को निपटाले, 'पण्णत्त सत्त नए' ॥८॥
नहीं जातिवाद का प्रश्रय, प्रश्रय सच्चारित्र का ।
ऐसे व्यापक वचन तुलसी श्रीजिन प्रवचन प्रकट ॥९॥

मल्लिनाथ जिन मगल रूप,
धनुष पचीसी सुन्दर स्वरूप ।
श्री अरनाथ प्रणमू वर्द्धमान,
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ।।३।।

सुमति पद्मप्रभू अवतस,
वासुपूज्य गातन श्याम ।
कुंथु पार्श्व अभिनन्दन जान
श्री जिनवर मुझ करो कल्याण ।।४।।

इण परे श्री जिनवर सम्भारिये,
दुख दारिद्र विघ्न निवारिये ।
पच्चीस पंसठ परिमाण,
श्रीजिनवर मुझ करो कल्याण ।।५।।

इण भणता दुख न आवे कदा,
जा निज पासे राख सदा ।
धरिये पच तणा मन ध्यान,
श्रीजिनवर मुझ करो कल्याण ।।६।।

श्री जिनवर नामे वछित मिले
मन वछित सहु आशा फले ।
धर्मसिंह मुनिवर भाव प्रधान
श्री जिनवर मझ करो कल्याण ।।७।।

जैन-धर्म की ज्योति

तर्ज अपनाना लिख रही हूँ।

जय जैन धर्म की ज्योति, जगमगाती ही रहे।
जिसको अपना कर जनता, उड़ता जड़ मूल दहे॥
मिति में सत्य भुगमु वर मज्जन न वैपर्द।
यह मूल मन्त्र समता का जिस अहिंसा जन रहे॥१॥
मुनियों हित पंच महाव्रत अणुव्रत गार्हस्थ्य में।
दुविहे धम्मे पन्नत्ते जो जगी दाविा सहे॥२॥
आत्मा सुख दुख की कर्ता स्वयं कारा राग को।
है अखण्ड दुबके सब, अपने कृत कर्म सहे॥३॥
सत्यरणी सब की अच्छा जनेतर जन क्या?
यहँ जिनवर बाल तपस्वी भी दनाराहए॥४॥
है विश्व अनन्त अनादि परिवर्तन क्रम में।
फिर स्रष्टा क्या सरजेगा जब लोए गामए॥५॥
पुरुषार्थी बनो सु प्यार जो होना होने दो।
स्मितात्मा सदा सुखी है अस्मि लोए परत्थए'॥६॥
आत्मा लहे परब्रह्म पद हट होत विकास की।
नव तत्व द्रव्य षट पटना सम्यग्दृष्टी सद्दहे॥७॥
सिद्धान्त समन्वयवादी, स्याद्वादी का सत्य।
अन्धाग्रह को निपटाने, पण्णत्ते सत्त नए॥८॥
नहीं जातिवाद को प्रश्रय, प्रश्रय सच्चारित्र को।
ऐसे व्यापक बन 'तुलसी', श्रीजिन प्रवचन ग्रहे॥९॥

धर्म-गान

तर्ज—तोता उड़ जाना

धर्म की जय हो जय, शान्ति निकेतन सत्य,
धर्म की जय हो जय, करुणा केतन जय धर्म की जय हो जय।

विश्व मैत्री की भव्य भित्ति पर,
सत्य अहिंसा के स्तम्भों पर,
टिका हुआ है महल मनोहर
सदा सचेतन सत्य धर्म ॥१॥

अनेकान्त झण्डा फहरायें,
जिन प्रवचन महिमा महकायें,
साम्य भाव का सबक सिखायें,
संकट मोचन सत्य धर्म ॥२॥

वर्ण जाति का भेद न जिसमें,
लिंग रङ्ग का छेद न जिसमें,
निर्धन धनिक विभेद न जिसमें,
समता शासन सत्य धर्म ॥३॥

कर्मवाद की कठिन समस्या,
हल कर देती जास तपस्या,
नहिं फल भुक्ति ईश्वर-वश्या,
व्यक्ति विकासन सत्य धर्म ॥४॥

शाश्वत अखिल विश्व को माना,
नहिं कर्ता हर्ता कोइ जाना,
'तुलसी' जैन तत्त्व पहचाना,
बोलो सब मिल सत्य धर्म ॥५॥

चौबीस जिन स्तुति

आदिनाथ अजित सम्भव, समरूंजी श्री अभिनन्दना ।
चरण तिन जी के शीश धर धर करूंजी पल पल वदना ॥१॥

सुमतिनाथ पद्म प्रभु, तरण तारण सुपार्श्व है ।
चन्दा प्रभुजी के चरण वन्दत मिटत जम की त्रास है ॥२॥

सुविधिनाथ शीतल स्वामी, श्रेयांस त्रिभुवन ईश है ।
वासुपूज्यजी के चरण वन्दत अहोनिश म्हारो शीश है ॥३॥

विमलनाथ अनन्त धर्मजी का ध्यान नित्य हृदय धरो ।
शान्तिनाथजी के चरण वन्दत फेर चौरासी में नहीं फिरो ॥४॥

कुन्थुनाथ अरनाथ स्वामी मल्लि अशरण शरण है ।
मुनि सुव्रतजीके चरण वन्दत मिटत जन्म अरु मरण है ॥५॥

नमिनाथ अरिष्टनेमि, पारश पारस प्रभु ध्याइये ।
श्री वर्द्धमानजी के चरण वन्दत, निश्चय ही शिवसुख पाइये ॥६॥

अष्टापद श्री आदि जिनवर वीर जिन पावापुरी ।
चम्पा नगरीमें श्रीवासुपूज्यजी सिद्धा श्रीनेमजी गिरिवर वरी॥
॥७॥

बीस जिनवर समेत शिखर सिद्धा, मुक्ते पहुंता मुनिवरु ।
ए चौविस जिन नित्य वन्दिये, सेवता जिम सुरतरू ॥८॥

चवन्जो पूरव धार' गणधर नान च्यार वखाणिये ।
जिन नहीं पण जिन सरिखा एहवा सुधर्मा स्वामी जाणिये ॥९॥

मात पिता, कुल जात निर्मल, रूप अनूप वखाणिये ।
देवता ने विल्लभ लागे, एहवा श्री जम्बू स्वामी जाणिये ॥१०॥

छाड सकल मिथ्यात देव, गुर धम की परीक्षा करो।
देव अरिहन्त जाप जपना, मोक्ष माग पग धरो ॥११॥

तारोजी तारा पार उतारो नमू नमू मन मन मोडने ।
इग्यारह गणधर बीस विहरमान, अज करूँजी कर जोडने ॥१२॥

सदाजी मगल होत जपता, ए चोवीस भगवान है ।
वहत ऋपजी जाण निश्चय, महासुखारी खाण है ॥१३॥

जिनराज तीथ मुणिन्द भिक्षु, पाटोधर भारीमाल है ।
तीजे पट ऋषराय गणपत जयगणि तुम्ब निहाल है ॥१४॥

पाट पञ्चम मघवा गणिवा, स्मरण करो भवि जाण नै ।
माणक गणि के चरण वन्दत, पामत पद निवाण नै ॥१५॥

पाट सप्तम डाल गणिवर, जाहिर तेज दिनन्द है ।
देव तरु सम वछित पूण श्री कालू गणि गण इन्द है ॥१६॥
श्री तुलसी गणि गण इन्द है ॥

परम पुरुष

(लय—सुगुणा पाप पङ्क परहरिये)

प्रह सम परम पुरुष न समरूँ ।

परम पुरुष न सुध मन समरया आतम निरमल होय ।
निज म निज गुण परगट जाय प्रह मम परम पुरुष ने समरूँ ।।
ऋषभ अजित सम्भव अभिनन्दन सुमति पदमप्रभ नाम ।
सप्तम स्वाम सुपास चन्द्रप्रभ सुविधि शीतल, अभिराम ।।१।।
श्रेयास, वासुपज्य जिन वन्दू, विमल अनन्त विशेष ।
धम, शान्ति कुन्थू, अर मल्ली मुनिसुव्रत तीर्थेश ।।२।।
नमि जिन, नेमिनाथ पारस प्रभु चौवीसमाँ महावीर ।
भाव निक्षेप भजन करताँ जन पाव भवदधि तीर ।।३।।
सिद्ध अनन्त आठ गुण नायक अजरामर कहिवाय ।
तीन प्रदक्षिण दई प्रणमु थिर कर मन वच काय ।।४।।
गौतम आदि इग्यारह गणधर धर्माचारज ध्येय ।
पच वीस गुण युक्त विराजे, उपाध्याय आध्येय ।।५।।
अढी द्वीप पनरा क्षेत्रां म पच महाव्रत धार ।
समिति गुप्ति युत सुध साधु वन्दू वारम्वार ।।६।।
दुषम आरे भरत क्षत्र मे, प्रगटया भिक्षु स्वाम ।
अरिहत देव ज्यूं धम दिपायो पायो जग म नाम ।।७।।
पटधर भारमल ऋषिरायो जय जग मघ महाराज ।
माणकलाल डालगणि कालू अष्टम पट अधिराज ।।८।।
भाग्य योग भिक्षु गण पायो तेरापथ प्रख्यात ।

श्री सम्भव जिन स्तुति

तर्ज—हूँ बलिहारी हो जादवा

सम्भव साहिब समरिये, ध्याया हो जिण निमल ध्यान के ।
इक पुद्गल दृष्टि थाप न कीधा है मन मेरु समान के ॥
सम्भव साहिब समरिये ॥ ध्रुवपद ॥१॥

तन चंचलता मेट न, हुआ है जग थी उदासीन के ।
धर्म शुक्ल थिर चित्त धरी उपशम रसमें हुय रह्या लीन के ॥
॥स० ॥२॥

सुख इन्द्रियाँ दिकना सहू जाण्या है प्रभु अनित्य असार के ॥
भोग भयंकर कटुक फल, दख्या है दुरगति दातार के ॥स० ॥३॥

सुधा सवेग रसे भरया पेख्या है पुद्गल मोह पास के
अरति अनादर आण न आतम ध्याने करता विलास के
॥स० ॥४॥

मन छांडि मन वश करी इन्द्रिय दमन करी दन्त के
विविध तपे करी स्वामजी घाती कर्म नो कीधा अन्त के
॥स० ॥५॥

हू तुज शरण आवियो कर्म विदारण तू प्रभु धीर के
तें तो मन वश किया दुक्कर करणी शरण म्हावीर के
॥स० ॥६॥

संवत उगणीस भाद्रवे, सुदि इग्यारस आण विनोद के
सभव साहिब समरिया, पाम्यो है मन अधिक प्रमोद के
॥स० ॥७॥

श्री पद्म जिन स्तुति

तर्ज—जिंदव री

निर्लेप पद्म जिसा प्रभु, प्रभु पदम पिछाण।
संयम लीधो तिण समं, पाया चाया नाण।
पदम प्रभु नित समरिये ॥ध्रुवपद॥
ध्यान शुक्ल प्रभु ध्याय नैं, पाया केवल साय।
दीन दयाल तणी दशा, कहणी नाव काय ॥प० ॥२॥
शम दम उपशम रस भरी, प्रभु आपरी वाण॥
त्रिभुवन तिलक तूंही सही, तूंही जनक समान ॥प० ॥३॥
तू प्रभु कल्पतरु समा, तू चिंतामणि जोय॥
समरण करता आपरो, मन वंछित होय ॥प० ॥४॥
सुखदायक सहु जग भणी, तूही दीन दयाल॥
शरण आयो तुझ साहिबा तूही परम कृपाल ॥प० ॥५॥
गुण गाता मन गहगहे सुख सम्पति जाण॥
विघन मिटे समरण किया, पामे परम कल्याण ॥प० ॥६॥
संवत उगणीसे भाद्रवे, सुदी बारस दस॥

श्री वासुपूज्य जिन स्तुति

तज—इम जाण जपो श्री नवकार

द्वादशमा जिनवर भजिये राग द्वेष मच्छर माया तजिये
प्रभु लाल वरण तन छवि जाणी प्रभु वासुपूज्य भजल प्राणी ॥१॥
वनिता जाणी वतरणी शिव सुन्दर वरवा द्रुग धर्णी
काम भोग तज्या विषाव जाणी प्रभु वासुपूज्य भजल प्राणी ॥२॥
अजन मजन सूं अलगा, वलि पुष्प विलपन नहि विलगा
कम काटया ध्यान मुद्रा ठाणी, प्रभु वासुपूज्य भजनें प्राणी ॥३॥
इन्द्र थकी अधिका घोष मन्नागर कन्द नहीं चाप
वर साकर दूध जिसी वाणी, प्रभु वासुपूज्य भजल प्राणी ॥४॥
स्त्री स्नेह पासा दुदन्ता, वह्या नरक निगोद तणा पन्था
इह भव परभव दुखदाणी प्रभु वासुपूज्य भजनें प्राणी ॥५॥
गज कुम्भ दनें मगराज हणी, पिण दोहिली निज आतम दमणी
इम सुण बहु जीव वरया जाणी प्रभु वासुपूज्य भजल प्राणी ॥६॥
भाद्रवो पतम उगणीमा कर जोड नमूं वासुपज्य इसो
प्रभु गातां राम राम हुलसाणी प्रभु वासुपूज्य भजल प्राणी ॥७॥

श्री नमिनाथ जिन स्तुति

तर्ज—परम गुरु पूज्यजी मुझ प्यारा रे

नमिनाथ अनाथा रा नाथो रे, नित्य नमत कर्म नाठो हाथो रे।
कर्म कारण वार विख्याता प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥१॥
प्रभु ध्यान सुधारस ध्याया रे पद कमल जाणी पाया रे।
गुण उत्तम उत्तम गाया प्रभु नमिनाथ जी मुझ प्यारा रे ॥२॥
प्रभु वागरी वाण विशाला रे क्षीर समुद्र थी अधिकरसाला रे।
जग तारक दीन दयाला प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥३॥
थाप्या तीरथ चार जिणंदा रे मिथ्या तिमिर हरण न मुणिन्दा रे।
ज्ञान सेव सुर नर वन्दा, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥४॥
सुर अनुत्तर विमाण ना सेव रे, प्रश्न पूछया उत्तर जिन देव रे।
अवधिज्ञान करी जाण लेव, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥५॥
तिहा बैठा तै तुम ध्यान ध्यावे रे, तुम याग मुद्रा चित चावे रे।
ते पिण आपरी भावना भावे प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥६॥
उगणीस आसोज उदारो रे कृष्ण नोम गाया गुणधारो रे।
हुवो ध्यान हर्ष अपारा, प्रभु नमिनाथजी मुझ प्यारा रे ॥७॥

चिंतामणि पाश्वनाथ छन्द

सुगुण चिन्तामणि देव सदा, मुज सकल मनोरथ पूरमुदा।
कमलागर दूर न हो कदा, जपता प्रभु पाश्व नाम यदा ॥१॥

जल अनल मतगज भय जावे, अरिचोर निकट पण नही आवे।
सिह सप राग न सतावे, धन्य धन्य प्रभू पाश्व जिन ध्यावे ॥२॥

मच्छ कच्छ मगर जल माही भम, वडवानल नीर अथाह गमें।
प्रवहण बठा नर पार पम नित्य प्रभु पाश्व जिनन्द नम ॥३॥

विकराल दावानल विघ्न दहै ग्रह वस्ती धन ग्रास अकाल ग्रहै।
तुम नाम लिया उपशान्ति लहै वन नीर सरोवर जेम वहै ॥४॥

भरता मद लोल कलोल कर भ्रमरा गुजारव रोम भर।
करि दुष्ट भयकर दूरि कर, श्रीपाश्व नाथजी के समर ॥५॥

छाना छन छिद्र विनाय छल यश वास सूणी मन माही जल।
ते पिशुन पडे नित्य पाय तल, जपता प्रभु वरी जाय टल ॥६॥

धन देवी निशाचर फोड धख मुभ्फ मन्दिर पेसक दन सुरा।
अति उज्जव तास आवास अख परमेश्वर पाश्व जास पख ॥७॥

असराल विदारण हाथ हट, गलगोल जिटा गज कुभ घट।
मृगराज महाभय भ्राति मिट, रसना जिन नायक जेह रट ॥८॥

फरतो चिहुँ फेर फुफार फणि, धरणेंदु धस धरी रीम धणी।
भय त्रास न व्याप तेह तणी, धरता चित पश्वनाथ धणी ॥९॥

कफ कुष्ट जलोदर राग छूसे, गड गुवड देह अनेक ग्रसे।
विन भेषज व्याधि सब विनस, वामासुत पाश्व जे स्तवम ॥१०॥

धरणीद्र धराधिप सुर ध्यायो, प्रभु पाश्व पाश्व कर पायो।
छवि रूप अनोपम जुग छायो, जननी धन्य वामा सुत जायो ॥११॥

करता जिन जाप सताप वट, दुख दारिद्र दाहग माय घट।
हठ छाडि जीहा रिपु जार हटे, पद्मावती पारव जिहा प्रगट ॥१२॥

(ॐ नमो पार्श्वनाथाय धरणेंद्र पद्मावती सहिताय विसहर फुल्य मगलाय ॐ ह्रीं श्री चिन्तामणि पार्श्वनाथाय मम मनोरथ पूरय स्वाहा)

मन्त्राग्र गाया गूढ पढयौ, चिंतामणि जाण हाय चढया।
बाली महातम तेज वढयो, श्रीपार्श्वजिन स्तवन जेणे पढया ॥१३॥

तीर्थपति पारवनाथ तिलो, भणना जस वास निराग फ्लो।
मणिमत्र सकोमल हाय मिली, अमची प्रभु पारव आश फ्ला ॥१४॥

सुवा गच्छ नायक लाभ लिए हित क्षेम करण गुरु नाम हिए।
दिन दिन गच्छनायक सुख दिए कीरती प्रभु पारव सुगर किए ॥१५॥

पार्श्व-प्रार्थना

तर्ज—अपसाना लिख रही हूँ

प्रभु पारव देव चरणा म शत शत प्रणाम हो।
मेरे मानस के स्वामी, तुम्ही एक धाम हो ॥ (आ०)
दुनिया म देव लाखो, पग पग पुजा रहे ॥ २
पर इस रसना मे रोशन एक तेरा नाम हो ॥ १ ॥
तुम से न राग रती भर, नही द्वेष औरो से ॥ २
प्रभु वीतरागता तेरी मेरा विश्राम हो ॥ २ ॥
कैसे बनूँ मैं उऋण, उपकार से अहा ॥ २
चरणा मे चहे पन्हैया, यह मेरी चाम हो ॥ ३ ॥
पाकर पारव मणि वह, हत भाग्य जो रहा ॥ २
अब सच्चा पारस बनूँ मैं, बस एसा काम हो ॥ ४ ॥
नस नस म बस रहे हो, रस ज्यो कवित्व म ॥ २
भगवान भक्त 'तुलसी', इक वे तुम्ही राम हो ॥ ५ ॥

स्व निरीक्षणात्मिका महावीर स्तुति

तर्ज—नगरी नगरी द्वारे द्वारे

मेरे प्यारे त्रिशलानन्दन ! क्या तेरे गुन गाऊँ मैं ।
जब तक तेरे गुन गाने के, योग्य नहीं बन पाऊँ मैं ।।ध्रुवपद।।

वीर ! वीर बन सकता वह जो निर्भय बन कर चलता हो ।
आये कितनी ही विपदायें, जो न स्वपथ से टलता हो ।
सुनते ही विपदा का व्यतिकर ओ भगवन भय खाऊँ मैं ।।१।।

सदगुन से बढ़ने वाला ही वर्धमान को पा सकता ।
भावों से चढ़नेवाला ही, प्रभुवर का अपना सकता ।
अश्रु बहाऊँ अपने मे जब कभी सुगुण को पाऊँ मैं ।।मे० ।।२।।

तपोनिष्ठ शुद्ध श्रम रत ही श्रमण शिष्य कहलाता है ।
उद्यमशील स्वतन्त्र निरन्तर, श्रमणनाथ को पाता है ।
बहुल प्रमादी, तपभीरु क्या श्रम गुरुता बतलाऊँ मैं ।।मे०।।३।।

पर निन्दा करने में तत्पर जब तक मेरी रसना है ।
नाना रसास्वाद की लालुप जब तक मेरी रसना है ।
उस रसना पर पावन प्रभु को बिठलाता शरमाऊँ मैं ।।मे०।।४।।

मस्तक में अभिमान भरा, क्या तेरे पदमे नमन करू ।
आँखों में तव मम का दर्शन क्या दर्शन हित गमन करू ।
ध्यान लगाऊँ मनमें क्या जब उसे न स्थितिमे लाऊँ मैं।।मे०।।५।।

हूँ इतना कमजोर जोर की, बातों से प्रभु क्या बनता ।
नटठी के घोड़े में आती, कहाँ दौड़ने की क्षमता ।
चन्दन पार उतर जाऊँ, तद्रूप अगर बन जाऊँ मैं ।।मे०।।६।।

सोलह सती-स्तवन

आदिनाथ आदि जिनवर वंदी, सफल मनोरथ कीजिए ए ।
प्रभाते उठी मङ्गलिक कामे, सोलह सतिना नाम लीजिये ए ।।१।।

बाल कुमारी जग हितकारी, ब्राह्मी भरतनी बनडी ए ।
घट घट व्यापक अक्षर रूपे सोलह सती माही जे बडी ए ।।२।।

बाहुबल भागिनी सतिय सिरामणी,सुन्दरी नाम ऋषभ सुताए ।
अङ्क स्वरूपी त्रिभुवन माहं जेह अनुपम गुण युता ए ।।३।।

चन्दन बाला बाल पण थी, शीलवती शुद्ध श्राविका ए ।
उडद ना बाकुला वीर प्रतिलाभ्या, केवल लही व्रत भाविका ए।।४।।

उग्रसेन धुम्रा धारिणी नन्दिनी, राजमती नमि वल्लभा ए ।
यौवन वयसे काम ने जीत्या, सयम लेई देव दुल्लभा ए ।।५।।

पञ्च भरतारी पाण्डव नारी द्रुपद तनया वखाणिए ।
एक सो आठे चार पुराणा, शील महिमा तसु जाणीए ए ।।६।।

दशरथ नपनी नारी निरुपम, कौशल्या कुल चन्द्रिका ए ।
शील सलूणी राम जनेता, पुण्यतणा प्रणालिका ए ।।७।।

कौशम्बिक ठाम सन्तानिकनामे, राज्य करे रङ्ग राजिया ए ।
तसु घर घरणी मृगावती सती, सुर भवन यश गाजियो ए ।।८।।

सुलसा साची शीले न काची, राची नहीं विषया रस ए ।
मुखडो जोता पाप पलाए नाम लेता मन उल्लस ए ।।९।।

राम रघुवंशी तेहनी कामिनी, जनक सुता सीता सतीए ।
जग सहु ज [illegible] धीज [illegible] शीतल थयो शील थी ए

काचे तातणे चालणीबाधी, कुवा थकी जल काढियो ए।
कलङ्क उतारवा सती सुभद्रा, चम्पा बार उघाडियो ए ।।११।।

सुर नर वन्दित शील अखण्डित, शिवा शिव पद गामिनी ए।
जेहना नामे निमल थइए बलिहारी तसु नामनी ए ।।१२।।

हस्तिनागपुरे पाण्डुरायनी, कुन्ता नामे कामिनी ए।
पाण्डव माता दशे दशारनी बहिनी प्रतिव्रता पद्मिनी ए ।।१३।।

शीलवती नामे शीलव्रत धारिणी त्रिविध तेहने वन्दिए ए।
नाम जपता पातक जाये, दशन दुरित निकन्दिए ए ।।१४।।

निषिधा नगरी नलह नरिन्द नी, दमयन्ती तसु गेहिनी ए।
सकट पडता शील ज राख्यो त्रिभुवन कीरति जहनी ए ।।१५।।

अनग अजिता जग जन पूजिता, पुष्पचूला न प्रभावती ए।
विश्व विख्याता कामित दाता सालहवी सती पद्मावती ए ।।१६।।

वीरे भाखी शास्त्रे साखी 'उदयरतन' भाखे मुदा ए।
व्हाणु वाता जे नर भणशे, त लहशे सुख सम्पदा ए ।।१७।।

ब्राह्मी चन्दन बालिका, भगवती राजिमती द्रौपदी
कौशल्या च मृगावती च सुलसा सीता सुभद्राशिवा
कुन्ती शीलवती नलस्य दयिता चुल्ला प्रभावत्यपि
पद्मावत्यपि सुन्दरी दिन मुखे कुर्वन्तु मे मगलम

साधु वन्दना

साधुजी ने वन्दना नित नित कीजे, प्रह ऊगन्ते सूर रे प्राणी ।
नीच गति मा ते नवि जाये, पामे ऋद्धि भरपूर रे प्राणी ॥
॥साधु जी० ॥१॥

मोटा ते पञ्च महाव्रत पाले, छ काया रा प्रति पाल रे प्राणी ।
भ्रमरभिक्षा मुनि सूजती लेवे दोष बयालिस टाल रे प्राणी ॥२॥

ऋद्धि सम्पदा मुनि कारमी जाणे दीधी संसारने पूठ रे प्राणी ।
एहवा पुरुषा री वन्दगी करता आठे कर्म जावै टूट रे प्राणी ॥३॥

एक एक मुनिवर रसना त्यागी एकेक ज्ञान भण्डार रे प्राणी ।
एक एक मुनिवर वैयावच वैरागी एहना गुणा नो नाव पार रे
प्राणी ॥ साधु जी० ॥४॥

गुण सत्तावीस करी ने दीपे, जीत्या परीषह बावीस रे प्राणी ।
बावन तो अनाचार ज टाले तेने नमावू म्हारा शीश रे प्राणी ॥५॥

जहाज समान ते सन्त मुनीश्वर भवि जीव बसे जाय रे प्राणी ।
पर उपकारी मुनि दाम न मागे देव ते मुगति पहुंचाय रे प्राणी ॥६॥

ए चरणे प्राणी साता रे पावे पावे ते लील वीलास रे प्राणी ।
जनम जरा अन मरण मिटावे नावे फेरा गर्भावास रे प्राणी ॥७॥

एक वचन ए सतगुरु केरो जो बसे दिल माय रे प्राणी ।
नरक गति मां ते नवि जाये एम कहे जिनराय रे प्राणी ॥८॥

प्रभाते उठी ने उत्तम प्राणी सुणे गाथा रो ध्याय न रे प्राणी ।
ए पुरुषा री वंदगी करता पावे ते अमर विमान रे प्राणी ॥९॥

सवत् अठारह ने वर्ष अडतीस, सुमी ते गाम चौमास रे पाणी ।
मुनि आसकरणजी एणी परे जपे, हूं तो उत्तम साधा रो दास रे
प्राणी ॥ साधु जी० ॥१०॥

श्री भिक्षु गणीके गुणा की ढाल

तज कडखा

भेट भवि चरण ले शरण भिक्षु तणा,
मरण का डरण सब दूर भाग ।
मरण जोगा तणी खबर पडिया थका,
स्वाम भिक्षुतणी छाप लाग ॥ भेट० ॥१॥

वद्ध वे पज्य भाजन भये भरत मे,
पचमे काल असराल आरे ।
सूत्र ने वाचिया ज्ञान म राचिया,
तरण तारण भविजीव तार ॥ भेट० ॥२॥

प्रेम सू पूज रो जाप जपता थका,
बीज का चन्द ज्यू अधिक थाई ।
दशण कीजिये चरण चित्त दीजिये,
भीजिये ज्ञान वराग माही ॥ भेट ॥३॥

नाम सुणिया थका स्वाम भिक्षु तणो,
हस हिया मे हप ऊठ ।
और दृ ओपमा वहा कहू भविकजा,
आगणे दूध को मेह वूठे ॥ भेट० ॥४॥

त्याग ससार वैराग मन आण वे,
जाण वे खायला कवण खाटा ।
सतर शोधिया ज्ञान प्रमोदिया
जव छोडिया पाखण्ड जाण खोटा॥भेट०॥५॥

काम एकंत शिवपथ को स्वाम थे,
दर अरिहंत को ध्यान ध्याव ।
आगन्या वारला धम की वाग्ना,
कुण अनानी के मन भाव ॥ भेट० ॥६॥

सीम स्वामी तणी सीग राग्वो मदा,
वीसविसवा तणा वात जाणा ।
जिनवर भाखिया तिम हिज दाखिया,
"क मन माहि मत मूल आणा ॥भेट०॥७॥

शोध श्रद्धा मली, नाही राखा गली,
मावरो एम आचार भाल्यो ।
आप श्रीपूजजी व्रत स "ुद्ध हुआ,
"ूरवीर साधु मणी माहि घाल्या ॥भेट०॥८॥

काम करडा घणो स्वाग श्रद्धा तणा,
हिय थमणी दाहिनी जाण भाई ।
हिम्मत धारज्या, वात विचारज्यो,
मरदमी राग्ज्या मन माही ॥ भेट० ॥९॥

काल अनादि सू आप अरिहंत कह्यो
आगन्या माहिला धम म्हाग ।
निवद्य वात ते आगन्या माय छ,
मावद्य काम मगार मारा ॥ भेट ॥१०॥

वीर गणधर तणी पूज्य भिक्षु तणी
एक श्रद्धा वधु फेर नही ।
दूसरो मोय वताय द्यो भविकजन,
"ुद्ध साधु इण भरत माही ॥ भेट० ॥११॥

पूज्य भिक्षु तणा साध ग्ररु साधवी,
वीर गणधर तणी चाल चाल ।
पाचमा काल मे बीज चौथा तणी,
भागला बे मन माहि साले ।। भे० ।।१२।।

हु ग्रावलो बावलो होय के बठतो,
बूझतो बोल विपरीत वाको ।
"महेश' ग्ररजी कर एम कर जोड कै,
हेमजी स्वाम उपकार थाको ।।भे०।।१३।।

बहे कुगुरा तणे करम बाध्या घणा,
हेम को मो सिर शीश दावो ।
करज चुकाय दू किशनगढ माय ने
एक बार बलि फेर ग्रावो ।। भे० ।।१४।।

कर कठोर बाध्या घणा चीकणा,
हेमजी स्वाम कृ दु ग दीधो ।
जोग ग्राव जिके ग्राप कीज्या हिव
पूज्य का चरण को शरण लीधो ।।भे०।।१५।।

श्री भिक्षु स्तुति

गुरुवर ! क्षण क्षण म नवचिंतन भरदो भरदो भरदो ।
भिक्षो ! जन जन म नव जीवन भरदो भरदो भरदो ।।
तुम धम क्रांति उन्नायक थे,
तुम ग्रटल सत्य निर्णायक थे,
शासन के भाग्य विधायक थे,
ग्रपना वह ग्रनुपम ग्रनुशीलन भरदो, भरदो, भरदो ।।१ ।।

तुम साध्य सिद्धि से स्वस्थ बने,
पथ दर्शक परम प्रशस्त बने,
आत्मस्थ बने विश्वस्त बने,
अविचल अविकल वह सदगुण धन भरदो, भरदो, भरदो ॥२॥

कष्टों में क्षमा तुल्य क्षमता,
थी स्थितप्रज्ञ की सी समता
सबके प्रति निर्मम व ममता
अपनत्व लिये वह अपनापन भरदो, भरदो, भरदो ॥३॥

संयम के सच्चे साधक थे
आराध्य और आराधक थे,
जिनवाणी के अनुवादक थे,
वह धार्मिक मार्मिक सघन मनन भरदो, भरदो, भरदो ॥४॥

सब जीवों के तुम मित्र रहे
व्याख्या में व्यक्ति विचित्र रहे,
आत्मा से पूर्ण पवित्र रहे
आलोकपूर्ण वह अनुकम्पन भरदो भरदो भरदो ॥५॥

तुम ने नव नव उन्मेष किये
तुम ने नव नव उपदेश दिये
तुमने नव नव आदेश दिये
वह ओज भरा दृढ अनुशासन भरदो भरदो भरदो ॥६॥

समति में जीवित संस्कृति हो,
संस्कृति में अभिनव जागति हो,
जागति में धृति हो अविकृति हो,
तुलसी में वह अन्तर स्पंदन भरदो, भरदो भरदो ॥७॥

श्री कालू गणी पे गुणां की ढाल

तर्ज—सीता आव रे धर राग

भिक्षु शासन अधिक विकाशा अष्टम आसन धार ।
कालू कलिमल रास विनाशन प्रगटे जगदाधार ।।
भजिये निशिदिन कालूगणिन्द ।।१।।

थलवट देश प्रसिद्ध प्रदेशे, छापर नगर सुजाण ।
कोठारी कुलदीपक उदयो, जिम उदयाचल भाण ।। भ० ।।२।।

सज्जन जन मन हरण करन्तो मूलचन्द कुलचन्द ।
छोगा अंगज रङ्ग सनूणो जाणक पूरणचन्द ।। भ० ।।३।।

उगणीस तेतीस वर्षे प्रभु नो जन्म प्रसिद्ध ।
चम्मालीसे गुरु मघवा कर पामी संयम ऋद्ध ।। भ० ।।४।।

जननी संग अति उछरंगे मासी सुहिता साथ ।
चित चंगे रम रंगे संयम पाल स्वामी नाथ ।। भ० ।।५।।

अल्प समय में समय निहारी रहस्य विचारी सार ।
विद्या विविध प्रकारे धारी, कोविद कुल सिरदार ।। भ० ।।६।।

छयासठ साल डाल गणनायक, पद लायक हद पेख ।
लेख एक निज कर थी लिख न, कियो राज्य अभिषेक ।।भ०।।७।।

भाद्रवी पूनम पाट विराजत, थाट लगाया स्वाम ।
वाट वाट जश किरती फैली, पुर पुर ग्रामाग्राम ।। भ० ।।८।।

विचर्या गणि उपगार करण हित, देश प्रदेश मझार ।
घणा भव्य भवजल थी तार्या करुणादृष्टि निहार ।। भ० ।।९।।

एकाणु चौमास करायो, जोधाण गणईश ।
अति मंडाणे दीधी दीक्षा, एक साथ बावीस ।। भ० ।।१०।।

मन्धर तार पधारथा स्वामी मेदपाट म खास ।
दोय मास विचरी ने कीधो उपियापुर चौमास ।। म० ।।११
तिहाँ पूज्य ना दरसण कीधा, मेदपाट भूपाल ।
गुण उपदेश सुयश गुन्न कहियो, लहियो हर्ष विशाल ।।म०।।१२।।
चौमासो उतरियाँ गणपति, त्याथी कीध विहार ।
मालव देश पधारण कारण, पक्की दिल म धार ।।म० ।।१३।।
च्यार मास अन्दाजे विचरया, मालव दन्ते आप ।
जिन मारग दीपायो अधिका आगम दीपक थाप ।। म०।।१४।।
नवली नवली रचना प्रभु नी देखी जन समुदाय ।
सच वचनामत पान करी ने प्रमुदित पुर पुर थाय ।।म०।।१५।।
फिर पाछा पउधारचा प्रभुजी मेदपाट शुभ देश ।
वाम हस्त व्रण पीडा प्रगटी राग मूल सुविशेष ।। म० ।।१६।।
काय कष्ट म पिण गणी कीधा मजलो मजल विहार ।
गङ्गापुर चौमास करायो श्रीगुरु वचन उचार ।। म० ।।१७।।
अनुक्रम वहु राग समूह घर्यो स्वाम शरीर ।
अङ्ग अति पीडाणा ता पिण पज्य मनोवल धीर ।। म० ।।१८।।
जिम सग्रामे शूरवीर नर जूभे अति जूभार ।
तिम वदन सघाते जूझ्या गणपति साहस धार ।। म० ।।१६।।
जिम जिनकल्पिक मुनिवर वेदन वेद सम परिणाम ।
तिम तनु-व्याधि उदय हुवा थी गिणत न राखी स्वाम ।।म०।।२०।।
सहन शीलता परम पूज्य नीं, निरख निरख नर नार ।
चकित थई इम पभण वहा वहा, धन्य धन्य जगतार ।।म०।।२१।।
लोक हजारां गाम गाम ना, आया दरसण काज ।
परमानन्द लह्यो मन माहि लग्य अदभुत महाराज ।।म०।।२२।।

अल्प शक्ति में पिण गणिवरजी, शिक्षा अधिक रसाल ।
आपी सत सत्या न सम्वरी वचन अमूल्य विशाल ॥भ०॥२३॥
भाद्रव शुक्ल तीज दिन मुजने भिक्षु गण सिरताज ।
बिन्दु नो सिंधु कर थाप्यो, आप्यो पद युवराज ॥भ०॥२४॥
अति उपगार कियो मुझ उपर गणिवर गुणमणि धाम ।
किम विसराये तन मन सेती समरूँ आठूँ याम ॥ भ० ॥२५॥
सवत्सरी ना आप कराया छट्ठ धरी उपवास ।
छठठ पारणो कियो प्रभुजी प्रथम याम सुविमास ॥भ० ॥२६॥
सायंकाले स्वाम शरीर प्रसर्यो श्वास प्रताप ।
तो पिण समचित सखरो राखी कियो कष्ट नो लोप ॥भ०॥२७॥
पुदगल खीण पड़न्ता जाणी पचखायो सथार ।
सरधी ने समभावे गणिवर पहुँता स्वर्ग मझार ॥भ० ॥२८॥
सप्तवीस वत्सर लग कीधी, शासन नी सम्भाल ।
मात पिता सम चिहुँ तीरथ ना कीधी हृद प्रतिपाल ॥भ०॥२९॥
चउशत दस दीक्षा निज कर थी दीधी आप गणिन्द ।
अखिल जगत म जेहनो अधिको तपियो भाल दिनंद ॥भ०॥३०॥
गुण गम्भीर धीर धरणीधर, निर्मल गंग सुनीर ।
भजन भीर वीर गम करणी तरणी तारण तीर ॥भ०॥३१॥
अमृत झरणी शिव निसरणी वरणी करण सप्रेम ।
वाणी भ्रम हरणी तसु महिमा, वरणी जाव केम ॥भ०॥३२॥
प्रबल प्रतापी कुमता कापी, थापी सुमता स्वच्छ ।
जन भ्रमता तमता उत्थापी, आपी अदभुत लच्छ ॥भ०॥३३
इत्यादिक गुण गणवच्छल ना, समरयां चित अहलाद ।
वह गुण वा प्रभु मोहिनी मुद्रा, खिण खिण आवे याद ॥भ०॥३४॥
उगणीस तेराणु वर्षे, द्वितीय भाद्रपद मास ।
अल्पबुद्धि थी गणि-गुण गाया, पटधर आण हुलास ॥भ॥३५॥

तुलसी गणि गुण वर्णन

अथवा

बालिकाओं की अर्ज

—०—

प्राणों सूं भी प्यारा लागो प्रभुवर आप म्हांन जी ।
म्हे थारे शरण में हां फिर भट करो क्यां ध्यान जी ।।आंकड़ी ।।
पर उपकारी काम थांरो अपमादकारी नाम जी ।
कलियुग में सतयुग बरताया थे हो सच्चा राम जी ।। १ ।।

त्याग तपस्या दक्षता थारा कीरा माथा नहीं डाने ।
कीरा है सबड़ा गी जीभ धन्य धन्य यो नहीं बाने ।। २ ।।

बालिकाओं का प्रभो सद् विद्या का वरदान दो ।
स्वाभिमान का भान हुए ईसा एक विधान दो ।। ३ ।।

सुख-सुख आप विचरो देश प्रदेशां में विभो ।
छोटी सी एक प्रार्थना या, ध्यान में रखज्यो विभो ।। ४ ।।

पावन करो मरुस्थल को फिर चरण धरो सौराष्ट्र में ।
सौम्य में अमृत वर्षा कर, विचरो थे गुजरात में ।। ५ ।।

फिर से थली देश में आयर बाल को ज्ञान देना ।
सात च्याल्स का चौमासा, सरदार शहर में कर देना ।। ६ ।।

———

वरस गाठ

तज - वधावो गावो ।

रम खुशी रो दिन आज रो, म्हार बाबजी री आई वरस-गाठ रे ।
मन्त्रीश्वर बाबा भलो दिपायो तरापथ न ।। आन्डी ।।
जनम लियो मेवाड म, जठ जम्यो महाराणो परताप रे ।
मन्त्रीश्वर० ।।१।।

अडिग मनोबल देखता पड दुनिया उपर छाप रे ।।
।। मन्त्रीश्वर० ।।१।।

तुलसी प्रभु मद मोहनो तू तो शासन स्तम्भ समान रे ।।
।। मन्त्रीश्वर० ।।३।।

पाँच पाटा की हाजरी तू तो साभी होय प्रधान र
।। मन्त्रीश्वर० ।।४।।

शिक्षा अमृत पाय के किया लाखा पर उपकार रे ।।
।। मन्त्रीश्वर० ।।५।।

बड भागी ससार म थया आज शहर सिरदार र ।।
।। मन्त्रीश्वर० ।।६।।

जन्म जयन्ति जुगा जुगा, म्हता थाँरी रे मनवा सालो सालरे ।
।। मन्त्रीश्वर० ।।७।।

दवाँ यह आशीषडी, रहो अजर अमर चिरकाल रे ।।
।। मन्त्रीश्वर० ।।८।।

मन्त्री मुनी श्री मगनलाल जी

की

स्मृति मे

॥ दोहे ॥

वयावद्ध शासन सुभट मन्त्री मगन महान ।
महावद छठ मङ्गल दिवस, कर्यो स्वर्ग प्रस्थान ॥ १ ॥

अद्भुत अतुल मनोबली शासन स्तम्भ सुधीर ।
दृढ़ प्रतिन सुस्थिर मति आज विलाया वीर ॥ २ ॥

उदाहरण गुरु भक्ति का, दिल्ला वडो वजीर ।
सागर सो गम्भीर वो आज विलाया वीर ॥ ३ ॥

विनय विन विशाल जो, मनो दौपदी चीर ।
सफल सुफल जीवन मगन, आज विलाया वीर ॥ ४ ॥

नानव वाठी नहर म साभ प्रार्थना लीन ।
मुन सचिन्न सारा रह्या उदासीन आसीन ॥ ५ ॥

रिक्त स्थान मुनि मगन रो भरो सघ के सन्त ।
मगन मगन पथ अनुसरो, करो मता मतिवन्त ॥ ६ ॥

सुख ! अब कर अन्तराल सुखे आज कनी तुज आस ।
हाथा म धार हुया याव रा गुरवारा ॥ ७ ॥

"आचार्य श्री तुलसी"

जनवन्द्य श्राचाय श्री तुलसी द्वारा घोर तपस्वी मुनि
श्री सुखलालजी के समक्ष समुच्चारित

गीतिका

(तज—श्रौर रङ्ग दे र वाल्या श्रौर रङ्ग दे)

घार तपसी हो मुनि घोर पतसी,
थारो नाम उठ उठ जन भोर जपसी ।
घार तपसी हो 'सुख' घार तपसी,
थारो जाप जप्या करमा री कोड़ खपसी ॥घो० ॥श्रा॥
दो सौ वरसा री भारी ख्यात है वणी
थारो नाम मोटा तपस्या रै साथ ववसी ।
श्रो श्रनशन श्रो सहज समता,
लाखा लोगा र दिला म थारी छाप छपसी ॥१॥
काया पर कुहाडी व्हाणी काम करडो
मारी पाटा उपर वठ करणी गपसपसी ।
तपस्या श्रातापना, स्वाध्याय करणी,
थारी सेवा भावना रै लार सारा दवसी ॥२॥
स्वामीजी रो शासन तप सजम री सुरसरी,
इणम न्हावसी जका रो सारो पाप धुपसी ।
श्रापणै शासण री सता ! चढती कला,
इणम घणा ही तप्या है श्रो घणा ही तपसी ॥३॥
शिखर चढ्या है चढता ही रहसी,
गण रो श्रोग श्राभ पर जा पाताल रुपसी ।
इण स्यु विमुख श्रवनीत जो हुसी,
वारै भाग रो भानुडो छा छिती म छुपसी ॥४॥

सजम जीवन जीवा, पण्डित मरण मरा,
थार दोनू हाथा लाडू गावो खुशी र खुशी ।
लघी लवी यात्रा मगल फागण वदी,
'सुख' साधना 'सुन्दाई गाई गणी तुलसी ।।४।।

॥ दोहा ॥

भद्रोत्तर तप उत्तर, अनशन दिन इकवीस ।
घोर तपस्वी सुख मुनि साधक विश्वावीस ।।

सरनामु

तज—जिधर देखता हू उधर तू ही तू है

बताव तारु परभवनु सरनामु शु छे ?
कयो मुल्क ने गामनु नाम शु छे ?
कया चोकमा गोल तारी हवेली ?
बताव साचु साचा तणु नाम शु छे ?
बताव० ।।१।।

कया गोत्र जाति धर्म छे मुसाफिर ?
बताव तारा बापा ना व्यापार शु छे ?
आव्यो अही बोल शा काम माटे ?
हजी भेगा रहेवाना प्रोग्राम शु छे ?
बताव० ।।२।।

सम्बन्ध शाना अजाण्यानी साथे ?
न आपे दगो खातरी तारी शु छे ?
मटे मुभवण केम 'चन्दन आ मननी ?
करवानु तारु खरु काम शु छे ?
बताव० ।।३।।

सिलोको

श्री छोगाजी महासती को

छोगा माता सुख साता नी दाता,
माता मरुन्धा ज्यू महि म विख्याता
ख्याता जेहनी दुनिया में अगियाता,
वाता कहतां पण लागे दिन राता ॥ १ ॥

सारी उम्मर तो छिन्नू वरसा री,
तेपन वरसा निज आतम ने तारी।
भारी धारी तप रूपी तरवारी,
तनु पांसलियां करि न्यारी जी न्यारी ॥ २ ॥

इक गुणतीसां नो थावडो करियो,
इक उगणीशो तिम मतरं अनुसरियो।
सोले धाले दिल इक चवद चारु
कीहा इग्यारा ब वारा वारु ॥ ३ ॥

ग्यारह पन्चोला छव नी इकलासी
चाला सतरे तिम तेला छयांसी।
वला हेला कर कर ने वोलाया,
ऊपर छयासी पनरहस पाया ॥ ४ ॥

अब उपवासा नी सख्या सुण लीज्यो,
ए गुणचालीस चवद गिण लीज्यो।
तल तिविहारा अणसण पचखीज्या,
वासर पाचां मू साचे मन मीज्यो ॥ ५ ॥

अब दिन साराँ री समच है गिणती,
पिच्योत्तरस अर नवती नी मिणनी ।
जेहना सवत्सर सारा इक्वास
एक माम ना ऊपर दिन तीस ।। ६ ।।

खाणो पारणे ठण्डा खीचडियो
साजा सोना पण खाव नही अडियो ।
इण पर खार्या पिण हाव गडवडियो
मानो माजी तनु धुर सघयण घडियो ।। ७ ।।

प्रति दिन गिणती रा खाणा द्रव्य ग्यारा
नित नित बाँ म सू कर करखे न्यारा ।
यचता तेहमाँ पण व अण बचारा,
ग्यारह वरसा लग इम इक्धारा ।। ८ ।।

त्यागी कारण म औषधि तप टारी,
भारी भारी भइ व्याधि जब जागी ।
पाणी भारी तिम वेदन लक्वारी
खाँसी कण्डू ज्वर टारी पखारी ।। ६ ।।

साल सितन्तर थी धार्यो एकन्तर
अन्तिम अवसर लग पडिया नहि अन्तर ।
मध्यदिन री तिम प्रहरा निरन्तर,
पचखण पचखावण फुरती अभ्यन्तर ।। १० ।।

नवकरवाली तो रहती नित पासे
करणाखाली तो बहती प्रति सासे ।
गाथा सूत्तर वाली सति सविलासे,
गणमण गणमण कर गिणती हुल्लास ।।११।।

क्यारे भिक्षुगणि भिक्षुगणि भजती,
क्यांर कानू नवकरवाली समनी।
क्यांर परमेष्ठी पांचां सजधजती,
क्यार निन्दया पणकार ज्यूं त्यजती ॥१२॥

तीरथ चारां सूं रहती अति राजो,
तीरथसामी ना सेवा हद साजो।
आती भक्ति हित भाजी जी भाजी
महिमा माजी नी मुलकां में छाजी ॥१३॥

वरसां छावीसां थाणो दृढ थाप्यो,
तो पिण बीदासर जन व्रज नहिं धाप्यो।
माता सद्गुण धन आप्या अणमाप्या,
सो पुरवासी वपु मंदर में व्याप्या ॥१४॥

भेट्यो माताजी अन्तिम हद मोको
चेतना दिल में पिण रहियो नहिं धोको।
चिणिया तुलसी गणि छवढालिया ओकों
ऊपर सिलाके गूथ्यो मनु गोखो ॥१५॥

महासती श्री झमकू जी के गुणों को ढाल

तर्ज—म्हारी रस सेलडिया

सतीसं वन्दन नित साधुपन पाल्या झमकू जी सती।
निज संयम जीवन आछो उजवाल्यो झमकू जी सती ॥ध्रुवपद॥
धम्मालोस रतननगर में हिरावता घर जामी।
ससुरालय चूरु का पारख, उभय पक्ष जग नामी जी ॥सतीस १॥

पसठठे डाहिम गणिवर,वर सयम_भार लहायो।
शहर लाडनू माही देगा भव सागर को पायो जी ॥
॥ सैतीस० ॥२॥

धानचदजी मगे छगामठ वीवानेर चामासो।
बाकी काल् चरण शरण मे सदा कियो सुखवासा जी ॥
॥ सतीस० ॥३॥

कालू गुरु की करुणादृष्टि पल पल भल आराधी।
आनंदित चित प्रभु परिचर्या सदा सवाई साधीजी ॥
॥ सतीस० ॥४॥

ज्गति अग आकार सुगुरु ना, विरला समभण पाव।
सती भमकू की मा अधिकाई कहा कुण जन विसरावजी ॥
॥ सतीस० ॥५॥

अतर ढाल

तज—वधज्यो र चेजारा थारी वल

वचन मधुरता भमक वन्न भभार,
काइ जाहिर सकल समाज म जी म्हारा राज ॥
हृदय निडरता दिल ठाठाक अपार
नहीं मान मरोड मिजाज म जी म्हारा राज ॥७॥
हाथ कुशलता चातुरता चित चङ्ग
काई निमल निज आचार म जी म्हारा राज ॥
सुगुरु भक्ति म भमकू शक्ति सुरङ्ग
अनुरवित तीरथ चार म जी म्हारा राज ॥७॥
सहनशीलता कारण म अणपार
काई दृढता नियम निभाण म जी म्हारा राज ॥
के तो कहिये भमकू विनय उदार,
तुलसी दिल गुणी गुण गाण म जी म्हारा राज ॥८॥

ढाल—मूलकी

सुगुरु सेवा करताँ करताँ, गङ्गापुर पुर माही।
बोझ काम बक्शीस सधाते, सब भोलावण पाई जी ॥
॥ सतीस० ॥

दोय हजार दोय की सम्वत मास आषाढ मझार।
अकस्मात तनु आमय उपनो, उपनो अधिक विचार जी ॥
॥ सतीस० ॥१

कालू गुरु सम मम सेवा मे, ग्रामाग्राम विहारी।
परम हर्ष दश वर्ष आसर रही जु साताकारी जी ॥
॥ सतीस० ॥१

गात्र कम्प ज्वर अरु बेचैनी, खबर थआ तिह्वार।
मैं 'मन्त्री' बन्धव' मुनि सगे, दर्शन दिया सुप्यार जी ॥
॥ सतीस० ॥१

तर तर रोग बढ़ाव ही पाम्यो, दूजै दिन द्वय वार।
दर्शन दे महाव्रत उचराया, सरघ्या भर हुंकार जी ॥
॥ सतीस० ॥१

मध्याह्ने आषाढ कृष्ण छठ परम समाधि पाम।
आराधक पद पडित मरणे, ममवसरी सुरधाम जी ॥
॥ सतीस० ॥१

वदना जी लाडाजी आदि सकल सत्यां ना साझ।
वडा अनोखा मोका पायो बाह सतियाँ सिरताज जी ॥
॥ सतीस० ॥१

दूजे दिन 'सादूलपुर, पुर म, भर परिषद रे माँय।
तुलसी गणपति सति गुण वर्णन कीहा मन हुलसाय जी ॥
॥ सतीस० ॥१

विघन हरण की ढाल

तज सो ही तेरापथ पाव हो

भिक्षु भारीमाल ऋषिराय जी, येतसी जी सुखकारी हो ।
हम हजारी आदि दे सकल सन्त सुविचारी हो ।
प्रणमू हृप अपारी हो अ० भी० रा० शि० का० उदारी हो ।
धममूर्ति धुन धारी हो, विघनहरण वद्धिकारी हो ।
सुख सपति सिरदारी हो भजो मुनि गुणाँ रा भडारी हो ।।१।।

दीपगणी दीपक जिसा, जय जगवरण उदारी हो ।
धम प्रभावक महाधुनी ज्ञान गुणा रा भण्डारी हो ।
नित प्रणमो नर नारी हो ।। भजो मुनि० ।। २ ।।

सम्वर सुधारस सारसी वाणी सरस विशाली हो ।
शीतल चन्द सुहावणा निमल निमल गुण न्हाली हो ।
अमीचन्द अघ टाली हो ।। भजो० ।। ३ ।।

उष्ण शीत वर्षा ऋतु सम, वर करणी विस्तारी हो ।
तप जप कर तन ताविया ध्यान अभिग्रह धारी हो ।
मुणना इचरजकारी हो ।। भजो० ।। ४ ।।

सन्त घनो आग सुण्या ए प्रगटयो इण आरी हो ।
प्रत्यक्ष उद्योत किया भला, जाणे जिन नायकारी हो ।
ज्यारी हू वलिहारी हो ।। भजो ।। ५ ।।

धोरी जिन् शासन धुरा अहोनिशि म अधिकारी हो ।
परम दृष्टि में परखियो, जबर विचारणा थारी हो ।
सुजश दिशा अनुसारी हो प्रगटया ऋषि तू भारी हो ।।भ०।।६।।

वृद्ध सहोदर जोत नो, जगधारी उपकारी हो ।
लघु सहोदर सम्प नो, भीम गुणा रा भण्डारी हो ।
सखर सुजश ससारी हो ।।भजो० ।।७।।

समरण थी सुख सम्पज, जाप जप्या जश भारी हो ।
मनवंछित मनोरथ फल, भजन करो नर नारी हो ।
वारु बुद्धि विस्तारी हो ।। भजो० ।।८।।

रामसुख रलियामणो तेसठ उदक आगारी हा ।
अडसठ ने पैतालीस भला वलि उगणीस चौविहारी हो ।
बड तपसी तपधारी हो ।।भजो० ।।९।।

मन दढ वच दढ महा मुनि, शील दढ सुविचारी हो ।
परम विनीत पिछाणियो, मरधा दढ सुधारी हो ।
समरण सुख दातारी हा ।।भजो० ।।१०।।

शिव वासी लावा तणा, तप गुण राशि उदारी हो ।
आसासी निज आतमा खटमासी लग धारी हो ।
शीतकाल मझारी हो, सह्या शीत अपारी हो ।। भजो० ।।११।।

उष्ण शिला तथा रेत नी, आतापना अधिकारी हो ।
तप वर चौमासा तणो सुणता इचरजकारी हो ।
गुण निष्पन्न नाम भारी हो ।। भजो० ।।१२।।

बाहर तप करडो कियो खटमासी लगधारी हो ।
ब्यावंचिया मुनि वाल्हो छठ छठ अठम उदारी हो ।
जावजीव जयकारी हो ।। भ० ।।१३।।

शीत उष्ण बहु तप कियो, सुगुरु थकी इक्तारी हा ।
परम प्रीत पाली मुनि जाकी कीरत भारी हा ।
समरण सुखदातारी हो ।। ।। भ० ।।१४।।

गुणठाणे चौथे गुणी, श्रमण सत्या हितवारी हो ।
श्र० सि० मा० उ० सा० ने सदा, प्रणमे बारम्बारी हो ।
श्राणी हुए श्रपारी हो ।। ग० ।। २३ ।।

सिणगारा जी मोटी सती हरखूजी हितकारी हो ।
माता तास सुहामणी, श्रणसण चरण उदारी हो ।
श्राराध्यो इकतारी हो ।। भ० ।। २४ ।।

हिम्मतवान सती हुती व्यावच करण विचारी हो ।
विघन हरण वच्छलकारणी दिल सम्पत दातारी हो ।
जयजश हरष श्रपारी हो ।। भ० ।। २६ ।।

जाण तिवे नर जाणता, श्रवर न जाणे लिगारी हो ।
धम उद्योत करण धुरा, निवह्य कारज सारी हो ।
श्राणा तास मझारी हो ।। भ० ।। २७ ।।

परम प्रीत सतगुरु थकी विरुद वहे इकतारी हो ।
पूरण श्रासता ताहरी, म्हारा मन मझारी हो ।
जबर दिशा जयकारी हो ।। भ० ।। २८ ।।

श्रधिक विनय गुण श्रागलो, थिर दृढ श्रासता धारी हो ।
तसु मिटवा जोग उपद्रव मिट, ते श्रघ दल रूप परिहारी हो ।
निश्चय री बात त्यारी हो न टल हाणहारी हो ।। भ० ।। २९ ।।

उगणीसै तेरह सम, बसन्त पन्चमी सोमवारी हो ।
पञ्च ऋषि नो परवडो, स्तवन रच्यौ तन्तसारी हो ।
प्रसिद्ध शहर सिरियारी हो गणपति जयजशकारी हो।।भ०।।३०।।
विघन-हरण री स्थापना, भिक्षुनगर मझारी हो ।
महासुदी चवदस पुण्य दिने कोधी हुए श्रपारी हो ।
तास शिष्य वच धारी हो, तीरथ चार मझारी हो ।
ठाणा एकाण तिवारी हो ।। भ० ।। ३१ ।।

मुनिगण

मुणिन्द मोरा भिश ने भारीमाल, वीर गायम री जाडी रे_।
स्वामी मारा, अनि भलीरे ।। मोरा स्वाम० ।। १

मणिन्द मोरा, श्राप माहि तथा गण मे जाण,
सुध सजम जाणा तो रे । स्वामी मारा रहिवा सही रे मो० ।।२

मुणिन्दमारा टाणा स रहिवा रा पचखाण,
वली अनन्त सिद्धारी साखर । स्वामीमोरा समसहीरे मो० ।।३

मुणिन्दमारा, अवगुण वोलण रा त्याग
गण म अथवा बाहिर रे स्वामामारा विहुंतणर मा० ।। ४

मुणिन्द मारा मुनिवर जे महाभाग,
ग्रह मर्याद आराध रे । स्वामी मारा, न्ति घणा रे ।। ५ ।।

मुणिन्द मारा तीज पट ऋषिराय
गेनमीची गुखकारी रे । स्वामी मारा मुनि पिता रे ।। ६ ।।

मुणिन्द मोरा सम दम उदधि सुहाय
हम हजारी भरी रे । स्वामी मारा गुण रत्ता रे ।। ७ ।।

मुणिन्द भारा, जयजश करण जिहा
दीपगणी दीपक सारे । स्वामी मारा महा मुनि रे ।। ८ ।।

मुणिन्द मोरा गणपति म सिरताज,
विदह क्षेत्र प्रगटिया रे । स्वामी मोरा, महाधुनी रे ।। ९ ।।

मुणि द मोरा अमियच द अणगार,
महा तपसी वरागी रे स्वामी मोरा, गुण निला रे मो० ॥ १० ॥

मुणि द मोरा जीत सहोदर सार,
भीम जबर जयकारी रे स्वामी मोरा अति भलो रे मा० ॥११॥

मुणि द मोरा, कादर तपसी करूर,
रामसुख ऋषि रूडो रे, स्वामी मारा रजतो रे मो० ॥ १२ ॥

मुणि द मारा शिव दायक शिव सूर, सतीदास सुखकारी रे।
स्वामी मोरा गाजतो रे ॥ मो० ॥ १३ ॥

मुणि द मोरा, उभय पीथल वद्धमान, साम राग युग वधव र।
स्वामी मोरा, नेम स रे ॥ मो० ॥ १४ ॥

मुणि द मोरा हीर वखत गुण खाण थिरपाल फत सुजपिये रे।
स्वामी मोरा प्रेम सू रे ॥ मो० ॥ १६ ॥

मुणि द मोरा, टोकर ने हरनाथ अखयराम सुखराम ज रे।
स्वामी मोरा, ईसरु रे ॥ मो० ॥ १६ ॥

मुणि द मोरा, राम सम्भु शिव साथ जवान मोती जाचा रे।
स्वामी मोरा दमीसरु रे ॥ मा० ॥ १७ ॥

मुणि द मारा, इत्यादिक बहु म त, वलि समणी सुखकारी रे।
स्वामी मारा रूपती र ॥ मो० ॥ १८ ॥

मुणि द मोरा कल्लू महा गुणव त तीन व धव नी माता रे।
स्वामी मोरा जीपती रे ॥ मा० ॥ १९ ॥

मुणिन्द मारा गङ्गा र गिणगार, जेता दासा जाणी रे।
स्वामी मोरा महासती रे ॥ मो० ॥ २० ॥

मुणिन्द मोरा, जोता महा जाधार रम्पा आदि सयाणी रे।
स्वामी मारा दीपती रे ॥ मा० ॥ २१ ॥

मुणिन्द मोरा गागन महा सुखकार ग्रमर गुरी ग्रधिष्टायक रे।
स्वामी मारा दायका रे ॥ मा० ॥ २२ ॥

मुणिन्द मारा, स्वरूनी जयचनी सार ग्रनुकूल वली इन्द्राणी रे।
स्वामी मारा सहायका रे ॥ मा० ॥ २३ ॥

मुणिन्द मारा उगणीस पनरे उदार फागुण सुदि दशमी रे।
स्वामी मारा गाइया रे ॥ मा० ॥ २४ ॥

मणिन्द मारा जयचन्द सम्पति सार बीदासर सुखसाता रे।
स्वामा मारा पाइयो रे ॥ मो० ॥ २५ ॥

श्री गजसुकुमाल मुनि की ढाल

तर्ज—सरवर पाणीडा ने जावं

धन्य गजसुकुमाल मुनि ध्यान धरे।
ऊभा अटल स्मसान गुण गान भने।
गान भरे अघ शान हरे ॥ धन्य० ॥ ध्रुवपाद ॥
जिण ही दिन दीक्षा लीनी, जिनवर नेमी पास।
तिण ही दिन मांहा भारी, कठिन प्रयास।
प्रतिमा बारहवी भिक्षु की अङ्गीकार करे ॥ध० ॥१॥

जीवित ही कीन्हो, अपने अग को उतसग।
एक ध्यान दीन्हों, वरवा वार अपवग।
इतल आया सामिल विप्र पूरव वर समरे ॥ध० ॥२॥

वग ज्येष्ठ बात करी दुष्टता कमाल।
सन्त शीश तीरा धरया बाँध मिटटी पाल।
चटक करतो त्यो चण्डाल या कसाई भी डर ॥ध०॥३॥

हाहा ! ! रे पापी ! कसा साहस कठोर।
सीग पूछ स्थान दाढी मूछ वाला ठोर।
फिर भी थाई है अधिकाई नही घास चरे ॥ ध० ॥४॥

रोम रोम दाह लागी सन्त के शरीर।
तो भी नही मुह से कियो आह बडवीर।
जूझ्यो जोधा ज्यू अडोल मुनि खेत खरे ॥ ध० ॥ ५ ॥

खदबद खदबद सीजे सिर जसे खीचडी।
तो भी तनु अविचल मानो आइ मीटडी।
अहा कसी है मजबूती कवि कल्पना परे ॥ ध० ॥ ६ ॥

र र चेतनिया मत मनवा हो अधीर ।
तू भी किस ही व एसी थोड़ी होगी पीर ।
यह सच्ची है कहानी जो कर सो भरे ॥ ध० ॥ ७ ॥

ज्यादा ज्यादा वदना जो उनका न सही ।
तब भी मनवा तो अनतवार हो ।
शांति शांति का पुकार जीवड़ा ! मत बिगर ॥ध०॥८॥

तू है ज्ञानवान ज्ञानशून्य तेरो ज्ञान ।
ज्ञान के सम्बन्ध ही से होवे तेरो पार ।
अब तू ध्यान ना बिगाड़ वही जर ना जरे ॥ ध० ॥९॥

अपना अपना बना है बिगड़ा है बिगाड़ ।
शत्रु वही मित्र वही दुख सुखकार ।
अपनी आतमा सुधर तो सारा जग सुधर ॥ध०॥१०॥

आ है उपकारी तेरा साथी जैन पात ।
धर्म अन्य विश्वनाथ बण्या है दलाल ।
मन मन द प्रभाव धर उपकारी उपरे ॥ ध० ॥ ११ ॥

निंदित ही अम्मन मन होणा न चहे ।
सगती में जीव कही पाहा न लहे ।
स्व पीड़ या पराई व स्याद्वाद धरे ॥ ध० ॥ १२ ॥

सीगी का चटको गहणा बना मुश्किल होय ।
तन कष्ट में तो जाणे जीव पाया मोय ।
सब ही 'तुलसी' बिन नाव भव उदधि तरे ॥ध०॥१३॥

राजा मोहजीत

एक वार श्री इन्द्र महाराज ने देवताओं की सभा में कहा कि मोहजीत राजा का सारा परिवार निरमोही और बड़ा आध्यात्मवादी है। अपनी प्रिय से प्रिय वस्तु के वियोग में भी धय से विचलित नहीं होता। अध्यात्मवाद की और वेदान्त की ऊंची ऊँची चर्चा मे रस लेने वाले व्यक्तियों की कोई कमी नहीं है कमी तो उन सिद्धान्तों को जीवन में एक रस करने वालों की है।

एक सुरपति द्वारा साधारण मनुष्य की इतनी असाधारण प्रशंसा सुन कर वहीं बैठे हुए किसी देवता ने इस तथ्य को परीक्षा की कसौटी पर कसना चाहा।

उसने अपनी दैविक शक्ति द्वारा मोहजीत राजा के इकलौते राजकुमार को छिपा दिया और आप योगी का वेष बना कर धूनी रमाने लग गया।

इधर राजकुमार का पता लगाती हुई एक दासी इधर आ निकली और योगी से पूछने लगी।

दासी—महाराज ! क्या आपने राजकुमार को देखा है ?

योगी—क्या कहूं, कहने की बात हो तब न ?

दासी—महाराज ! जो हो सो कहिये। घबराइये मत।

योगी—हाय ! अभी अभी मेरे आश्रम के सामने एक सिंह ने राजकुमार को मार खाया ! अफसोस ! अफसोस ! कहते योगी रोने-सा लग गया।

दासी बोली—पता लगाना अपना कर्तव्य है किन्तु मृत्यु के पश्चात रोना कौन-सी बुद्धिमत्ता है। जिसमें तुम तो गृहत्यागी योगी हो। फिर शोक करते हो तो क्या तुम अभी तक अन्तर रोगी हो।

राजकुमार की माता के पास पहुँच कर दुखद मृत्यु का हाल सुना देता है।

राजकुमार की माता बोली—आप भोले हैं। यह मेरा पुत्र और मैं इसकी मा जब यह बात ही गलत है तब मोह किसका? आप इस शरीर से उत्पन्न पुत्र को मेरा पुत्र बतला रहे हैं मैं मेरे शरीर को भी मेरा नहीं समझती। जो मेरा है वह मेरे से कभी नहीं बिछुडता।

रे भाता! भरम मे क्यूं भम क्यूं तुज भाग ज ऊठी रे।
किण रो मा सुत केहना, ए सहु बात ज भूठी रे।
ग्यान दर्शन चरण माहरा, ते तो कोइयन लूट रे।
निरमल गुण शुद्ध आतमा, कहो किणविध खूट रे।

योगी ने सोचा—क्या है यदि मा तब को मोह नहीं है तो? जिसका जीवन शृङ्गार गया है उस पत्नी को तो मोह अवश्य होगा ही।' देखू वह क्या कहती है। इस भावना के साथ योगी श्री मोहजीत राजा की पुत्रवधू के पास हृदय को हला देने वाले मत्यु के समाचार सुनाने को चल पडा। बहन! तेरे वल्लभ को मेरे आश्रम के पास मे सिंह ने मार डाला। इसलिये मुझे ऐसा असह्य आघात पहुँचा है कि भगवान जाने या मैं जानू।

यह सुन कर राजकुमार की पत्नी बोली—योगीराज! मेरा वल्लभ मेरे हृदय में विराजमान है, वह सदा अमर है। आप किसके मरन का जिक्र और फिक्र कर रहे हैं।

तर्ज—आवो जावो वे करो सहिया वटो जाजम विछाय—

मुज वल्लभ मुज माय विराज, ज्ञान चरण गुणधीर।
अवर सहु सपना री माया, तू क्यू हुवो दिलगीर ॥
॥ १ ॥ योगेश्वर ! तू क्यू हुवो दिलगीर।
आतम स्वरूप ओलख करणी सू ज्यू पामो भवजल तीर ॥१॥
स्थिति अनुसार परिवार सहु जन, मात, तात, सुत वीर।
पिउ, तिरिया बहनी भतीजी भाणेजी कोइयन भांग भीर ॥२॥
तू क्यू योगी थरहर कम्प्यो प्रेम हुआ दिलगीर।
भस्म लगाय भरम नही भाग्यो नही जाण्यो निजगुण हीर ॥३॥
मुझ प्रीतम मुझ पास निरन्तर आतम स्वभाव अमीर।
अयोगी अभोगी, अरोगी असागी ज्ञान अखण्ड गुणधीर ॥४॥
अभेदी अवेदी अखेदी अछेदी चेतन निजगुण हीर।
तेह हण्या किण रा न हणीज नही काई नो सीर ॥यो०॥५॥
हर्ष शोक तज सज सयम गुण धर ज्ञान प्रमोद मधीर।
सवेग रस आनन्द मन सीच्या त्रुट कम जजीर ॥यो०॥६॥
ए प्रीतम कम बधवा ना कारण भोगदायक महाभीर।
सहजेई विरह थयो विष पोटली खुलगई गाढ कठोर॥यो०॥७॥
भोग थकी दु ख नरक निगोद ना अनन्तानन्त सही पीर।
ते भोग दायक नो माट किम आणू किम होऊ दिलगीर
॥यो०॥८॥

आतम मित्र एही सुखदायक, आतम निजगुण हीर।
आतम अमित्र राग द्वेष तणे वस चिहु गति भ्रमण जजीर॥६॥

धन धन जे नर नार बालापणे, धार चरण गुणधीर।
उपशम रस अवलम्बन करि ने, अजर अमर शिव सीर ॥१०॥
हू पिण चरण धार करू करणी हरषे मुझ मन हीर।
मोह विलाप करू किण कारण, साभ तू मुझ वीर ॥यो०॥११॥
तू यागिदार पूजण लागो, न आया ज्ञान सधीर।
नान-दशन घर है अति ऊण्डो, तू फसिया मोह जजीर ॥१२॥
योगी सुण मन माहि विमास, अहो अहो वचन अमीर।
धन ना सुन्दर अधिक अमोलक धन धन ज्ञान गम्भीर
॥यो०॥१३॥

इह प्रकार सारे परिवार का निममत्व देखकर देवता ने अपना सही रूप प्रकट कर लिया। तथा छिपाये हुए राजकुमार को राजा के चरणो म सौप कर कहा—'जसा इन्द्र महाराज ने कहा था, उससे भी बढ कर मैंने आपके परिवार को निरमोही और नाती पाया। धन्यवाद !!

अनाथी मुनि की ढाल

तज—रावण राय आगा अधिक अथाय

राय श्रेणिक बाडी गयो, दीठो मुनि एकन्त ।
रूप देखी अचरज थयो, राय पूछ रे वत्तान्त ।
श्रेणिक राय ! हू, रे अनाथी निग्रन्थ ।
मैं तो लीधो र, साधुजी रो पथ ॥ श्रेणिक० ॥ १ ॥

कोसम्बी नगरी हुँती, पिता मुज प्रबल धन ।
पुत्र परवार भरपूर स्यू, तिणरा हूँ कुवर रतन ॥श्र०॥२॥

एक दिवस मुन वेदना उपनी मास्यू खमियन जाय ।
मात पिता झूरया घणा, न सक्या रे मुझ वेदना वटाय॥श्र०॥३॥

पिताजी म्हारे कारणे खरच्या वहोला दाम ।
तो पिण वेदना गई नही ग्हवोरे अथिर ससार ॥श्र०॥४॥

माता पिण म्हार कारणे, धरती दुख अथाय ।
उपाव तो किया घणा पिण म्हारे रे सुख नही थाय॥श्रे०॥५॥

व धु पिण म्हारे हुता, एक उदरना भाय ।
औषध तो वहु विध किया पिण कारी न लागी काय॥श्र०॥६॥

बहिना पिण म्हारे हुँती, बडा छोटी ताय ।
वहु विध लूण उवारती, पिण म्हारे रे सुख नही थाय ॥श्रे०॥७॥

गोरडी मन मोरडी, , गोरडी अबला बाल ।
देख वेदना म्हायरी, न सकी रे मुझ वेदना टाल ॥श्रे०॥८॥

आग्या वहु आगु पड, मीं न रही गुभ काय ।
माण पाण विभूषा तजी, पिण म्हारे र समाधि न थाय
॥ श्रे०॥ ८॥

प्रम वितुधी पदमणी, मुभस्य अलगी न थाय ।
वहुविध वदना मैं सही वनिता रही रे विललाय ॥श्रे०॥१०॥

वहु राजवद्य बुलावियां किया अनेक उपाय ।
चन्दन लेप लगावियां पिण म्हार रे समाधि न थाय ॥श्रे०॥११॥

जग म कोई किणरो नहीं, तत्र मैं थया रे अनाथ ।
वीतराग जी रे धम विना नहीं कोई र मुगतिरा साथ॥श्रे॥१२॥

वन्ना जावे माहरी, तो लऊँ सजम भार ।
इम चिन्तवता वेदना गई, प्रभाते र थया अणगार ॥श्रे०॥१३॥

गुण सुण राजा चिन्तवे, धन धन एह अणगार ॥
राय श्रेणिक समकित लीनी वान्दी आयो रे नगर मभार
॥ श्रे० ॥ १४ ॥

अनाथीजी रा गुण गावता, कट कर्मारी कोड ।
गुण सुनसुन्दर इम भणै, ज्याने वन्दूरे बकर जोड ॥श्रे०॥१५॥

साधु-सतियों को शिक्षा

तर्ज—पिया दूर देशान्तर जाइ ने

मतिमन्त मुणी, सुकुलीणी हो श्रमणी, गुरु शिक्षा धारिये ।
पश्चिम रयणी, उठ ऊठ अक्षर अक्षर सम्भारिये ॥ एआंकडी ॥
मुनि पञ्च महाव्रत आदरिया, तजि धण कण कञ्चन पर्वरिया
मनु कञ्चन गिरिवर कर धरिया ॥मतिमन्त ॥ १ ॥
पणवीस भावना पांचा नी, गिणवाई गुरु गणधर ज्ञानी ।
भावो निज निज कण्ठे ठानी ॥ मतिमन्त० ॥ २ ॥
नव बाड ब्रह्मव्रत नी भाखी, एक काटनी ओट अजब राखी ।
समरो निशि वासर दिल साखी ॥ मतिमन्त ॥ ३ ॥
तेवीस विषय पचेन्द्रिय ना, बसय चालीस विकार वना ।
परहरिये पल पल शुद्ध मना ॥ मतिमन्त ॥ ४ ॥
हलवं हलवं मारग हालो गाडर वत नीची दृग न्हालो ।
पग पग धुर समिति सम्भालो ॥ मतिमन्त ॥ ५ ॥
कटु कक्कश भाषा मति बोलो, बालो तो वयण रयण तोलो ।
तो लोक उभय भय नही दोलो ॥ मतिमन्त ॥ ६ ॥
बयांलिस एषण दोषणिया, तिम पञ्च मण्डला ना भणिया ।
सहु राखो आङ्गलियाँ गिणिया ॥ मतिमन्त ॥ ७ ॥
उपयोगे उपधि ग्रहो मूको, पञ्चमी नी जयणा मति चूको ।
गुप्तित्रय गुप्ता सुमग ढूका ॥ मतिमन्त ॥ ८ ॥

है आठू ही प्रवचन माता, जो रहसे एहने मुख माता।
ता नहीं थाम्ये कोई दुखदाता ॥ मतिमन्त ॥ ९ ॥
विधियुक्त उभय टक पडिकमणा, तिण दृष्टिए पडिलेहण करणा।
है पजण हेतु रजोहरणा ॥ मतिमन्त ॥ १० ॥
पडिलेहण पडिकम्मणो करतां, पञ्चमी गोचरिये संचरता।
मनि बात करा तिम फिरघिरता ॥ मतिमन्त ॥ ११ ॥
इच्छा मिच्छादिक जे भारी कहि दश विधि शुद्ध समाचारी।
आचरिये अहर्निशि अनिवारी ॥ मतिमन्त ॥ १२ ॥
तत्तीनाशातन टालीज, असमाधिय ना मद गालीज।
सबला सह मूल उखाडीज ॥ मतिमन्त ॥ १३ ॥
छल कपट भूठ म मति र फसा, दिल बाहिर माहि रखा इकसा।
बिल पसत पन्नगराज जिसा ॥ मतिमन्त ॥ १४ ॥
गुरु आणा प्रणाधिक जाणो, गुरु दृष्टिए निज दृष्टि ठाणो।
कोई वात मनोगत मत ताणा ॥ मतिमन्त० ॥ १५ ॥
रयणाधिक मुनि ना विनय करा अविनय अपलक्षण दूर टरो।
मकरो ललना जन रो लफरो ॥ मतिमन्त ॥ १६ ॥
निज अवगुण क्षण क्षण सम्भारो परगुण सह प्रेम परम धारो।
मन मच्छर टारो परवारो ॥ मतिमन्त ॥ १७ ॥
गणि गण स्यु राखो इकतारी, प्रीतडली पय शाकरवारी।
ज्यू उद्धरस्य आतम थाँरी ॥ मतिमन्त ॥ १८ ॥
गह मूक्या मुनि जिह वैराग ग्रही दीक्षा गुरु कर वडभागे।
तिम पालण प्रेम रखा मागे ॥ मतिमन्त ॥ १९ ॥
परिषह थी मन मत कम्पावो स्वाध्याय ध्यान प्रतिपल ध्यावो।
शासन नी महिमा सह गावो ॥ मतिमन्त ॥ २० ॥
चतुरधिक पञ्चाश मुनि श्रमणी, गुरु चरणा माने मौज घणी।
सरदारशहर छवि खूब बणी ॥ मतिमन्त ॥ २१ ॥

श्रावकों को शिक्षा

तर्ज—दुराजी छोटो सा

श्रावक व्रत धारा, निज जीवन धन सम्भारा रे ॥ जा० ॥
जनागम रहस्य विचारा रे, श्रावक व्रत धारा।
क्षणिक विषय-सुख खातर आतुर, मानव भव मत हारा रे ॥
॥ गा० ॥ एश्रा० ॥

अव्रत-नाला बहै दश चारा रोकण ताम प्रचारा रे ॥ श्रा० ॥
आत्म-तलाव कर्म जल विरहित, करवा हित अविकारी रे ॥१॥
हिंसा, वितथ, अदत्त र मन्मथ, लोभ क्षोभ करनारा रे ॥ श्रा० ॥
निज मन्दिर में तस्कर-लस्कर तास करन मुह कारा रे ॥ २ ॥
ईर्ष्या द्वेष असूया मत्सर, घर घर क्लेश करारा रे ॥ श्रा० ॥
कलुषित हृदय कलह दिल दूषित, तास करन प्रतिकारो रे ॥ ३ ॥
मुक्ति महलना पञ्चम पेडी, नेडी नजर निहारा रे ॥ श्रा० ॥
वीर विभू सन्तान स्वान तुमे, कातरता न सिकारा रे ॥ ४ ॥
निरय निरय गति निगम निराधा, व्यंतर असुर विसारा रे ॥श्रा०॥
ज्योतिषि ऊपर वैमानिक सुर देवो तास दुवारा रे ॥ ५ ॥
धन्य जघन्य समय शिव सम्भव, त्रिणभव में निस्तारो रे ॥श्रा०॥
आत्मानन्द अमन्द अपूरव, व्रत वैभव विस्तारा रे ॥ ६ ॥
त्याग नाग नहिं सिंह बाघ नहीं, माग नहीं भयकारो रे ॥ श्रा० ॥
हृदय विराग भाग जागरेणा वपू कम्पे दिल धारो रे ॥ ७ ॥
चित्त प्रधान पणिया श्रावक मन्त्री अभय कुमारो रे ॥ श्रा० ॥

शङ्ख-पोखली भगवति सूत्रे, सुलसा सति श्रियकारा रे ॥ श्रा० ॥
रानी चेलणा जयर जयन्ती, निमुणो तस अधिकारो रे ॥ ६ ॥
भिक्षु रचित बारह-व्रत चौपई विस्तृत रूप विचारो रे ॥श्रा०॥
दृग गोचर अथवा श्रुति-गोचर कर कर आत्म उद्धारो रे ॥१०॥
उगणीस नव नवनी वर्षे, चुरू शहर मझारो रे ॥ श्रा० ॥
तुलसी गणपति व्रत सम्पत्ति हित, आखी सीख उदारो रे ॥११॥

—०—

तीन मनोरथ

तर्ज—जब तुम ही चले परदेश

जब हम ही छोड ससार, सकल परिवार, बने अणगारा।
है वो दिन धन्य हमारा ॥ ए आकडी ॥
आरम्भ परिग्रह हैं इतने, जिनमे हम फस रहे हैं कितने।
जिस दिन इनसे पायेंगे छुटकारा ॥ है वो दिन०॥१॥
दुनिया यह सारी झूठी है, चमत्कार पोली मुट्ठी है।
तन धन यौवन इन्द्रजाल अनुहारा ॥ है वो० ॥२॥
ये मात पिता अरु नन्दन हैं, स्त्री का मोटा बन्धन है।
जिस दिन टूटेगा यह जाल पसारा ॥ है वो० ॥३॥
खाने से तृप्ति न हो पाई, चीजें ता हमने सब खाई।
तप्ति होगी जब कर दँग सथारा ॥ है वो० दिन ॥४॥
ये तीन मनोरथ हैं प्यारे हर राज हृदय से ही धारे।
श्रावक लोगों है का यह नेम उदारा ॥ है वो० ॥५॥

—०—

शील की नव वाड (ढाल)

श्री सतगुरु पाय नमी करी, श्री जिनवर नी वाणी रे।
उतराध्ययन सोलमें अध्ययन, ब्रह्मचारया री वाड बखाणी रे॥
ब्रह्मचारी नव वाड विचारो ॥ १ ॥

स्त्री पशु पण्डक सहित थानक, ब्रह्मचारी तिहा टाल रे।
मुसा मजारी ने दृष्टान्ते, प्रथम वाड इम पाल रे ॥ ब्रह्म०॥१॥

स्त्री कथा करे नही मुनिवर, सुर नर नो मन डोल रे।
नीर चले नींबू री बात सुणता, दूजी वाड इम बोल रे॥ब्रह्म०॥३॥

पीठ फलग सेज्या नही बैठे नारी बठे तिण ठामो रे।
बाक टूट औसणता आटो, बडकम्पर फल नामो रे ॥ब्रह्म०॥४॥

नेह धरी नारी रूप निरख, फर्शे अग उपगो रे।
निजर भाख्यो सूरजी देख्या, चौथी वाड व्रतभगो रे ॥ब्रह्म०॥५॥

न रहै शीलवन्त भीतर अन्तर, न सुण जाझर नो झमको रे।
हास विलास रुदन सेवत दृष्टान्त, गाजे मोर ठमको रे॥ब्रह्म०॥६॥

पूरवला काम भोग मति चितारो तिणस्यू आरत उपजअधिकोरे।
आग वध इधण री सगत, छाछ बटाउ दृष्टन्तो रे ॥ब्रह्म० ॥७॥

सरस आहार विगय बलि अधिको, भोगव्या वपत थाय वधतो रे।
सनिपात वध दूध मिश्री पीधा तिण स विग लीजे तू मन्तो रे
॥८॥

अतिमात्र अधिको जीमे, काम भोग विषय रस जाग रे।
सेर रा ठाव म दोय सेर उरे, तो आठमी वाड इम भागे रे॥९॥

चोवा चन्दन चरचे अगे, आभूपण अति चङ्गो रे।
छगन मगन हुवे वेश वणावे, नवमी वाड व्रत भङ्गो रे॥ १० ॥

रतन अमोलक अधिक अनोपम, जिण तिणनैं न दिखावे रे।
राजा र हाथ स्य खोसी लेवें, ज्यूं शीलें रतन न गमावे रे॥११॥
शील पाले ते सुखिया होसी सुखी होसी नर नारी रे।
सूत्र वचन जो श्रद्धे सवला, तो मुगत जासी व्रत धारी रे॥१२॥

अठारह पाप

तर्ज—नीकी मीरवड्ली रे लहिये

प्राणातिपात प्रथम अघ भाख्यो दूजो मृषावाद।
अदत्तादान तीजो अघ कहिये, चौथा मथुन विषाद॥
सुगणा पाप पङ्क परिहरिये, पाप पङ्क परहरिये दिल सूं।
वोसिराव अघ भार इह विधि निज आतम निस्तार॥ सु०॥१॥
पञ्चम पाप परिग्रह ममता, क्रोध मान माया लोभ।
दशमो राग एकादशमो पुन द्वेष करे चित्त क्षोभ॥ सु०॥२॥
बारमो कलह अभ्याख्यान तेरम, ते पर शिर आल विषाद।
चवदमो पिशुन तिका खाय चुगली, पनरमो पर परिवाद॥३॥
जेह असयम मे रति पाम, अरति संयम रै मांय।
रति अरति ए पाप सोलमो भाख्यो श्री जिनराय॥ सु०॥४॥
सतरमो कपट सहित भूठ बोल माया मोसो तेह।
मिथ्या दर्शन शल्य पाप अठारमा तहथी ऊँधो सरधेह॥सु०॥५॥
मो र नू मारग संसग तिहा ए, विघ्नभूत कहिवाय।
पुन दुर्गति ना कारण छ ए पाप अठार ताय॥ सु०॥६॥
ते अष्टादश पाप प्रते मुनि, वोसिराव धर गात।
संयम तप करी भावित आतम, महा ऋषि मनिवत॥सु०॥७॥

इह विधि पाप प्रते वोसिरावी, भावे भावन सार।
परभव नी चिन्ता तज पूरी कह्या चावा द्वार ॥गु०॥८॥

जिनकल्पी की ढाल

जिन कल्पी कष्ट उदेरि ने लेव, परिग्रह सहै सम परिणामो रे।
ग्राक्रोश विविध प्रकार ना उपज,
ताइ उदेरि न जावे तिण ठामा रे। शूरा वीरा रा ग्रो शुद्धमारग ॥ १ ॥

मास मास खमण कोइ करै निरन्तर इतरा कर्म कटे एक छिन मे।
वचन कुवचन सहै सम भाव राग द्वेष न ग्राणे मुनि मन म रे ॥शू०॥२॥

मास सवा नव जीव रह्यो गम म तो ए दुख कितरा दिन का।
एम विचार सहै सम भावे शूर मुनि दृढ मनका ॥ ३ ॥

लाभ ग्रलाभ सहै सम भाव, वली जीतव मरण समानो।
निन्दा स्तुति सुख दुख समचित सम गिण मान ग्रपमानो ॥४॥

तेईस तेतीस सागर ताइ जीव वसिया नरक मझारो।
ग्रा किंचित दुख स्यू सू दिलगीरी एम विमासे ग्रणगारो ॥५॥

मेघ सरिसा मोटा मुनिवर, कियो पादुपगमण संथारो।
खोली म जीव हुवा तन त्याग्यो, एक मास पहली गुणधारो ॥६॥

सालिभद्र न धन्न सरिसा
ज्यारो सुखमाल तन श्रीकारो रे।
त्या पिण मास मास खमण तप कीधा
वले पादपगमण संथारो रे॥शू०॥७॥

रोग रहित तीर्थङ्करो तन ते पिण लेवैं कष्ट उत्मेरा ।
तो सहजा ही रोगादिक उपना आई,
तो सम परिणामा सहै शूरवीरा ॥ शू० ॥८॥

इत्यादिक मुनि स्हामो देखो
ते कष्ट पड्या नहीं काचा रे।
अल्पकाल म शिव सुख पामे शूर शिरोमणि साचा ॥६॥

नरकादिक दुख तीव्र-वेदना जीव सहि आ ती वारा ।
तो किंचित वेदना उपना महामुनि सहै आणी मन हर्ष अपारो।१०।

ए वेदना थी हुव कर्म निजरा ए वेदना थी कट कर्मो ।
पुण्य रा थाट बंध शुभ जाणे, वले हुव निजरा धर्मो ॥११॥

समचित वेदन सुखरा कारण ए वेदन थी कट कर्मो र ।
सुर शिवना सुख लहै अनोपम वल हुव निजरा धर्मो ॥१२॥

समभाव सह्या होव निजरा एकन्त
असमभावे सह्या होव पाप एकन्तो र ।
ठाणा अङ्ग चौथे ठाणे श्री जिन भाख्या
इम जाणी समचित सहै सन्तो रे॥शू०॥१३॥

कर्म नी सज्झाय

देव दानव तीर्थङ्कर गणधर, हरि हर नरवर सबला ।
कर्म प्रमाणे सुख दुख पाया, सबल हुआ महा निबला ।
रे प्राणी कर्म समो नहि कोई ॥ १ ॥

आदीसरजी ने कर्म सताया वर्ष दिवस रह्या भूखा ।
वीर ने बारह वर्ष दुख दीधा, उपना ब्राह्मणी कूखा ॥ रे०॥२॥

बत्तीस सहस देशा रो स्वामी, चक्री सनतकुमार।
सोलह रोग शरीर मे उपना, कर्म किया तन छार। रे० ॥३॥
साठ सहस सुत मारया एकण दिन जोध जवान नर जैसा।
सगर हुआ महा पुत्र नौ दुखिया कर्म तणा फल एसा ॥रे०॥४॥
कर्म हवाल किया हरिचन्द ने बेची सुतारा राणी।
बारह वर्ष लग माथ आण्यो, नीच तणे घर पाणी ॥ रे० ॥५॥
दधिवाहन राजा री बेटी, चावी चन्दनबाला।
चोपद ज्यो चोहटा मे बेची, कर्म तणा ए चाला ॥ रे० ॥ ६ ॥
सम्भू नामे आठमो चक्री, करमा सायर नाख्यो।
सोलह सहस यक्ष ऊभा देख, पिण किण ही नहिं राख्यो ॥रे०॥७॥
ब्रह्मदत्त नामे बारमो चक्री, कर्मां कीधो आधो।
इम जाणी प्राणी थे काई, कर्म कोई मत बाधो ॥ रे० ॥ ८ ॥
छप्पन कोड यादव रो साहिब, कृष्ण महाबली जाणी।
अटवी माहि मुवो एकलडो, तिन बिल करतो पाणी ॥रे० ॥९॥
पाडव पाच महा जुभारा, हारी द्रौपदी नारी।
बारह वर्ष लग वन रडवडिया, भमिया जेम भिखारी ॥रे०॥१०॥
बीस भुजा दस मस्तक हुता, लक्ष्मण रावण मारयो।
एकलडे जग सहु नर जीत्या ते पिण कर्मा सुह रयो ॥रे०॥११॥
लक्ष्मण राम महा बलवन्ता, अरु सतवन्ती सीता।
कर्म प्रमाणे सुख दुख पाम्या वीतक बहुत मा बीता ॥रे०॥१२॥
समकितधारी श्रेणिक राजा, बेटे बाध्या मुस्का।
धर्मी नर ने कर्म धकायो, कर्मां सूँ जोर न किसका ॥रे०॥१३॥
सती शिरोमणी द्रोपदी कहिये जिण सम अवर न कोई।
पाच पुरुष री हुई त नारी पूरव करम कमाई ॥ रे० ॥ १४ ॥

आभा नगरी नो जे स्वामी, साचा राजा च द ।
माई कीनो पखी कूकडा, कर्मो नाख्या ते फ द ।। रे० ।। १५ ।।
ईश्वर देव पावता नारी, कर्ता पुरुष कहाय ।
अहनिशि महल श्मसान म वासो भिक्षा भाजन खाय।।रे०।।१६।।
सहस्र किरण सूरज परितापो रात दिवस रहे फरता ।
सोलह कला शशि रजन चावा निदिन जाय घटता।।रे०।।१७।।
इम अनेक गण्डया नर करम भाख्या ते पिण साजा ।
अहपि हय कर जोडी न बीनव, नमो नमो कम महाराजा ।। '
।। रे० ।। १८ ।।

विमल विवेक

विमल विवेक विचारने रे आतम वश कर आप ।
मन सकोच माहलो रे, तो मिट कम ना ताप ।
सखर गुण सागह, उर सजग धरिये र ।। १ ।।
सुगुण गुनानी मानवी र, पण्डित ज बुद्धिवान ।
इन्द्रया दम आतम वश कर र, विवक दीप घट आण ।
सुगुणा साधजी, वर ममता नसावा र ।
कर करणी कम काटने, अमरापुर जावा र ।। २ ।।
पूरव कम बाध्या तिरे, उन आव किण वेर ।
सम परिणामा भोगवी रे लीज चितने घेर ।। सु० ।। ३ ।।
ए देही सुभ काचसी रे, जिम पीपल नो पान ।
डाभ अणी जल बिन्दुवो रे, जिम कुजर नो कान ।। सु० ।। ४ ।।
ऊपर दीसे आपती रे गुन्दर तन सिणगार ।
अन्तर अशुच थकी भरी रे, मूरख मत कर प्यार ।। सु० ।। ५ ।।

रागादि तन भाजिया रे सममाव मई पूर।
जिनकल्पी गजसुकमाल ने रे, धाज मान जम्र ॥ सु० ॥ ६ ॥

सालभद्र धन्ना मुनि र, चक्री सनतकुमार।
चौवीसमा जिन प्रादद रे वहिना किम लहू पार ॥ सु० ॥ ७ ॥

वा कष्ट सह्या उज्जल मन र ता म्हारी सी वात।
ए राग द्वेष वश मानवा र, पाप पिंड ाराम ॥ सु० ॥ ८ ॥

दश नाव याद्धा जीतन र पूर कराय जह।
एक प्रातम जीत प्रापरी र त अधिको गुण गह ॥ सु० ॥ ९ ॥

काम कटुक विम्पाक सा र ादि सुगना धारि जेह।
हतु नरक, निगाद ना रे, मन कर निर्णय नेह ॥ सु० ॥ १० ॥

भाग भयङ्कर जिन कह्या र, जेहना जाण परिणाम।
तीव्र कषाय ना दायकार तजिये तह मुणिन्द ॥ सु० ॥ ११ ॥

तात माहे उद प्राविया रे वश करवा ना उपाय।
उभय कह्या जिनराय जी र, प्रहा निशि याद प्रणाय ॥सु०॥१२॥

उपवास वतादि तप करै र भूरा तृषा सी ताप।
तन शृङ्गार निवारनो र कष्ट करै बहु माप ॥ सु० ॥ १३ ॥

वाह्य एह उपाय छ र भीतर मन सकाच।
क्रोध चौकडी नै दम र टाल आतम दोष ॥ सु० ॥ १४ ॥

भाव बहु विध भावना रे ध्यान धर दिन रन।
मद आठूं ई मारने ,र, खपाव कम श्रेण ॥ सु० ॥ १५ ॥

विविध वैराग्य नी धारता रे हिये वसाव एम।
धिकार मन चञ्चल भणी र आतम वश करू केम ॥सु०॥१६॥

तीव्र मोहणी कम नी रे मोनी है मतवाल।
दुगत जाता जीवर रे वधे बहु जजाल ॥ सु० ॥ १७

सूक्ष्म वुद्ध सु पेखिये रे शब्द रूप रस गंध फास।
ए सव वाधक पाच छै रे, मत करो तेहनी आश ॥ सु० ॥१८॥
मनागम पाचू देखने रे, दिल आण बहु राग।
द्वेष धर भूण्डा मझ र, तो लाग कम नो दाग ॥सु० ॥ १९॥
आपो परवश जे हुव रे, कन्ये न करणो काम
मन समभावे मांहिला रे ते चतुराई नाम ॥ सु० ॥२०॥
मन नी लहर मिटायवा रे,एहिज कर अभ्यास।
विमल विवक विचार ने रे तुरत टूट माह पास ॥ सु० ॥२१॥
सोवत बठत उठता रे सम परिणाम रहन्त।
मानसिक दु ख मेटिया र ते माटा मतिमन्त ॥ सु० ॥ २२॥
ए पुद्गल सुख छ कारमा रे तेहने जाण असार।
सुगंध दुगन्ध जिन कह्या रे दुगन्ध सुग ध धार ॥ सु० ॥२३॥
चिन्ता द ख प्रमाद छ रे, ते कापण ने कुहाड।
ध्यान सज्झाय सिद्धन्त था रे, मूल थी न्हारो उपाड ॥सु०॥२४।
को कर प्रशंसा ताहरी रे मत प्राणी मन रीझ।
निन्दा शब्द सुणी करी रे, तिण ऊपर मत खीझ ॥ सु० ॥२५।
औगुण देखी पारका रे क्रोध करी मत सींज।
अवर तणा सुख देखने रे डीला तू मत छीज ॥ सु० ॥ २६।
स्वर्ग तणा सुख कारमा रे, पाम्या बहुली वार।
रोलयो नक तिर्यञ्च म रे सहा घणेरी मार ॥ सु० ॥ २७।
लघुता पद बहु पावियो रे पायो पद नरेश।
एहवो तत्व विचार ने रे, सू अहङ्कार करस ॥ सु० ॥ २८।
जन्म मरण की वन्ना रे गभ वेदन असमान।
अशुच भर्यो जिन काढिया रे काय कर तोफान ॥ सु० ॥२९।

ए मारग पायो जिन तणा रे श्रद्धा आई हाथ ।
सफल जमारो छ सही रे, ए पाया गणि नाथ ॥ सु० ॥ ॥३०॥

ए मारग साचा अछ रे श्रेष्ठ अने परधान ।
उत्तम दायक मोक्षना रे कलङ्क रहित अमाम ॥ सु० ॥ ३१ ॥

निशल्य अनं निरलोभता रे, कम खपावण हार ।
मारग जावा मोक्षनो रे, एहिज छ आधार ॥ सु० ॥ ३२ ॥

सन्देह रहित निश्चल अछ रे सब दु ख भाजण भूर ।
ए मारग स्थिन मानवी रे सिभस्ये अरि ने चूर ॥ सु० ॥३३॥

लोकालोक विलोक्स्ये रे, कलह दावानल छोड ।
अन्त करस्ये सब दु ख तणो रे ए मारग सिर माड ॥सु०॥३४॥

एहवा शाशण पावियो रे ए पाया गणिराज ।
भव सागर म डूबतां रे मिलिया तारन ज्याज ॥ सु० ॥ ३५ ॥

शरणे आया जे मानवी रे लहस्ये सुख अपार ।
हिवडा पञ्चम काल मे रे आप तणो आधार ॥ सु० ॥ ३६ ॥

जिन नही जिन सारखा रे जाहिर तेज दिनन्द ।
शरने आयो आपर रे ए मुझ हुआ आनन्द ॥ सु० ॥ ३७ ॥

भिक्षु भारीमाल ऋषरायजी रे जयगणी चोथे पाट ।
तास प्रसादे छ मुझे रे, नित्य नवला गह घाट ॥ स० ॥ ३८ ॥

उगणीस बाईस म रे, श्रावण सुद दूज कहीस ।
सम्प शशी प्रसाद थी रे लाडणू विश्वावीस ॥ सु० ॥ ३९ ॥

(देशी—सीता आवै रे धर राग)

सप्त लक्ष [illegible] पथ्वीनी, सप्त लक्ष अपकाय ।
२ ॥[illegible] लक्ष जे, जीवायोनि खमाय ।

सुगुणाखमाविय तजखार ॥ १ ॥

गण म सन्त सती गुणव ता, सगलाँ भणी खमाय ।
निज आतम प्रति नरम करीनै, मच्छर भाव मिटाय ॥सु०ख०॥
विणहिज सन्त सती सू आया, कलुप भाव जो ताम ।
कठिण वचन तसु कह्या हुवै तो, खामे ले ले नाम ॥ सु० ॥
इमहिज श्रावक अनैश्राविका, सगला भणी खमाय ।
कलुप भाव करि कटुवच आख्यातो, नाम लेई नै ताहि ॥ सु० ॥
द्रव्य लिंगी वा अन्य दरशणी खामे सरल पणेह ।
क्रोधादिक करी कटु वच आख्यातो, नाम लई पभणेह ॥ ५ ॥
वडा सन्त नाकरी आशातन, त्रिहू जोगे करी ताम ।
सब गमाव उजल भावे लेई जूजूआ नाम ॥ ६ ॥
चिहु तीरथ अथवा अन्य जन प्रति राग द्वेष दिल आण ।
वचन कह्या तुवतास खमावु, इम कहै मुनि सुजाण ॥ ७ ॥
रेकारा तुकारा किणन रागद्वेष वश दीध ।
तेहथी खमत खामणा म्हारा एमवदै सुप्रसिद्ध ॥ ८ ॥
कठिन सीख दीधी हुव किणनें लहर वर मण प्राण ।
खमतखामणा म्हारा तेहथी वद नरम इम वाण ॥ ६ ॥
महाउपकारी गणपति भारी समकित चरण दातार ।
वारम्वार गमावै त्यानें अविनय किया किवार ॥ १० ॥
स्वारथ अणपूग्या गणपतिना बोल्या अवगणवाद ।
त पिण वारम्बार खमाव मेटी मन असमाध ॥ ११ ॥
विनयवन्त गणपतिना त्याथी धर्या कलुप परिणाम ।
वारम्वार खमावै तेहनें, लेई जूजूआ नाम ॥ १२ ॥

चिहुतीथ अथवा अन्य जनथी, मेटी मच्छर भाव।
इह विधि खमन खामणा करना, ते मुनि तरणी न्याव ॥ १३ ॥
परम नरम इम आतम करवी, धरवी समता सार।
ए विध बाम्हे रीत बताई तीजा द्वार ममार ॥ १४ ॥
सुगुणा खमाविये तजखार ॥ १४ ॥

आराधना की आठवी ढाल

तर्ज—साहजी कठ पोढ

पुण्य पाप पूर्व कृत सुख दुख ना कारण रे।
पिण अन्य जन नही, इम कर विचारण रे ॥ भाव० ॥१॥
पूरव कृत अघ जे, भोगवियाँ मुकाई रे।
पिण वद्यां विना, नही छुटको थाई रे ॥ भा० ॥२॥
जे नरक विषे म्हैं दुख सह्यो अनन्तो रे।
ता ए मनुष्य नो, किंचिन दुख हुतो रे ॥ भा० ॥३॥
जे समकित विण म्हैं चारित्र नी किरिया रे।
बार अनन्त करी पिण काज न सरिया रे ॥ भा० ॥४॥
हिव समकित चारित्र दोनूं गुण पाया रे।
वन्न सम पण, सह्यां लाभ सवाया रे ॥ भा० ॥५॥
आतो अल्प काल म टूट अघ जालो रे।
भगवति सूत्र म, कह्या परम कृपालो रे ॥ भा० ॥६॥
सूखा तण पूला जिम अग्नि विषेहो रे।
शीघ्र भसम हुवे, तिम कर्म दहेहो रे ॥ भा० ॥७॥

जिम तप्त तव जल, बिन्दु बिलजाव रे।
तिम दु ख समचित सह्यां, अघ क्षय थाव रे ॥ भा० ॥८॥
दु ख अल्प काल म मुनि गज सुकमाला रे।
समभावे करी, लही शिवपद माला रे ॥ भा० ॥६॥
अति तीव्र वेदना, बहु वष विचारो रे।
सही गिव सञ्चरमा, चक्री सनत कुमारो रे ॥ भा० ॥१०॥
जिनकल्पिक साधु लिये कष्ट उदीरो रे।
तो आव्यां उदय किम थाय अधीरो रे ॥ भा० ॥११॥
सही चरम जिनेश्वर वदन असराला रे।
सम भाव करी, तोड्या अघ जाला रे ॥ भा० ॥१२॥
कष्ट अल्प काल रो, पद्य सुर पद ठामा रे।
काल असख्य लग, दु ख नो नही कामा रे ॥ भा० ॥१३॥
सह्या वार अनन्ती दु ख नरक निगोदा र-
ता ए वदना सहूँ आण प्रमोदो र ॥ भा० ॥१४॥
रह्या गर्भावासे सवा नव मासो रे।
तो या वेदना, सहू आण हूलासो रे ॥ भा० ॥१५॥
अति रोग पिडाणा जग बहु दु ख पाव रे।
ते सभरी सहे, वेदन समभाव रे ॥ भा० ॥१६॥
शूली फासी फुन, भाला सूं भेद रे।
वहु जन जग विषे, अति वेदन वद र ॥ भा० ॥१७॥
ते तो जीव अज्ञानी, हू तो ज्ञान सहीतो रे।
समभाव सहू वेदन धर प्रीतो र ॥ भा० ॥१८॥
एतो सुख नो हेतु सहिया समभाव रे।
जह अघ निर्जर, पुण्य थाट बधाव र ॥ भा० ॥१९॥

वहु कर्म निजरा, थोडा भव भामो रे।
शिव पद सचर, भावागमन मिटाया रे ॥ भा० ॥२०॥
सुर सुख नी वांछा, मन म नहीं कीज रे।
सुख सुरलोक ना, दुख हेतु कहाजे रे॥ भा० ॥२१॥
सुख भ्रातमीक नी वाछा मन करतो रे।
इह विधि वदना, सहै समचित धरता रे॥ भा० ॥२२॥
पुदगल सुख पामता, तिण म गद्धि थाव रे।
(ता) अघ सचय हुव, अधिका दुख पाव र॥ भा० ॥२३॥
नर-इन्द्र सुरेन्द्र ना, काम भोग कगटाला रे।
तसु वाछा किया, दुख परम पयाला र॥ भा० ॥२४॥
तिण सू मुनि वदन, सहै शिव सुख कामी रे।
धम शुक्ल भलो, ध्याव चित धामी रे॥ भा० ॥२५॥
वहु कम निजरा, तिण ऊपर दृष्टि रे।
राख महामुनि, समता भ्रति श्रष्ठी रे॥ भा० ॥२६॥
स्वजनादिक ऊपर, छाड स्नेह पाशा र।
अति निमल चित शिवपुर नी भ्राशा रे॥ भा० ॥२७॥
सङ्ग स्त्रियादिक ना, जाण भुजग सामाणा रे।
सम भाव रहै मुनिवर महा स्याणा रे॥ भा० ॥२८॥
क्रोधादिक टाली, समभावन सारा रे।

आराधना की नवमी ढाल

अनन्त मेरु मिश्री भखी, पिण तृप्ति न हुवा लिगार।
इम जाणी मुनि आदरे अणसण अधिक उदार।
इह विधि अणसण आदरे ॥१॥

ते अणसण द्विविधि जिन कह्या पचम अग पिछाण।
पाउवगमन ने प्रथम ही दूजा भत पचखाण ॥इह० ॥२॥

प्रथम नमोत्थुण गुण, सिद्ध भणी सुखकार।
द्वितीय नमोत्थुण वली, अरिहन्त ने धर प्यार।
धन्य धन्य धन्य धन्य महामुनि ॥३॥

धर्माचार्य ने कर निर्मल चित नमस्कार।
त्याग करै त्रिहु आहार ना, जावजीव लग सार ॥ ध० ॥४॥

अवसर देखी नें कर, उदक तणो परिहार।
तृषा परीसह ऊपना अडिग रहै अणगार ॥ ध० ॥५॥

धन्नो काकन्दी तणो, पाउवगमन पिछाण।
मास सथार सुर थयो, सव्वट्ठ सिद्ध महा विमाण ॥ ध० ॥६॥

पाउवगमन खन्धक कियो, मास सथार सार।
अच्युत कल्पे उपना चव लेसी भव पार ॥ ध० ॥७॥

इमहिज मेघ मुनि भणी, आयो मास सथार।
विजय विमाने ऊपनो, मनु थई शिव सुखसार ॥ ध० ॥८॥

पाचू पाडव परवंडा मास पारणो न कीध ।
पचख्या पाउवगमन हा, मास सथार सिद्ध ॥ध०॥६॥
तीसर मुनिवर न भला, मास सथारो टाल ।
सामानिक थयो शक्र नो, भ्रष्ट व्रत चरण पाल ॥ध०॥१०॥
वरदत्त चरण छ मास ही, श्रठम अठम तप जाण ।
सथारा अष्ट मास नो, पाम्या कल्प ईशान ॥ ध० ॥११॥
मग्न सत्र महिमा निनो वली अनिरुद्ध कुमार ।
अधिक हुए अणसण करी पाहता मोक्ष ममार ॥ध०॥१२॥
आठू अग्रमहेपिया, कृष्ण तणी चरण धार ।
अति तप करी अणसण ग्रही पहुँती मोक्ष मभार ॥ध०॥१३॥
नन्दादिक तेर वली, नप श्रणिक नी नार ।
चरण ग्रही अणसण करी पामी शिव सुख सार ॥ध ॥१४॥
इत्यादिक मुनि महासती याद कर मन माय ।
भूख तृषादिक पीडिया, हर्ष चित अधिक सवाय॥ध०॥१५॥
शूर चढ सग्राम म, तिम मुनि अणसण माय ।
कर्म रिपु हणवा भणी, शूर वीर अधिकाय ॥ १६ ॥
जन्म मरण दुख थी डरया शिव सुख वाछा सार ।
त अणसण म सठा रहे ए कह्यो नवमा द्वार ॥ध०॥१७॥

चोबीसी की लावणी

अरिहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय, साधु समरणा
तीर्थंकर रतनारीमाला सुमरण नित्य करणा,
समरिये माला मेरी जान, समरिये माला, जुकटे करम का जाना

ए जीव तणा रखवाला, ध्यान तीर्थंकर का, धरणा रे,
पांच पद चोवीस जिणन्द का, नित नीजे शरणा ॥ १ ॥
श्री रिषभ अजित, सम्भव, अभिनन्दन, अति आनन्द करता,
सुमति, पद्म सुपार्श्व, चन्द्रप्रभ दास रहूँ चरणा, ॥
चरण नित्य बन्दू मेरी जान चरण नित्य बन्दू, ॥
ज्यू कट करम का फन्दा तुम तजो जगत का धन्धा,
दीठा होये नयन अमिता, ठरणा रे ॥ २ ॥
सुविधी, शीतल श्रेयास वासूपुज्य हिरदय माँही धरणा ।
विमल, अनन्त, धर्म नाथ, शान्ति जी, दास रहू चरणा ॥
जिनन्द्र मोहे तारो संसार लगे मोहे खारो,
वैराग्य लगे माहे प्यारो मैं सदा दास चरणों रे,
नाथ जो अब कृपा करणा रे ॥ ३ ॥
कुन्थु अर मल्लि मुनिसुव्रतजी प्रभु तारण तरणा
नमि, नेम, पार्श्व, महावीर जी पाप परा हरणा,
तर भव्य प्राणी, मेरी जान तर भव्य प्राणी,
ससार समुद्र जाणी सुणो सूत्र सिद्धान्त की वाणी,
पाप करम स अब तो मरणा रे ॥ ४ ॥
इग्याराजी गणधर बीस विरहमान बाधा सूँ मिटे मरणा,
अनन्त चावीसी कूँ नित नित वान्दू दुरगति नही पडणा ।
मिथ्या अन्ध मेटो मेरी जान मिथ्या अन्ध मटो
रहो धरम ध्यान मे शैठो, जिनराज चरण नित्य भेटो ।
दुख दारिद्र सब तो हरणा रे, ॥ ५ ॥
जन धरम पाया बिन प्राणी, पापसूँ पिंड भरणा,
नीठ नीठ मानव भव पायो, धरम ध्यान करणा,
करो शुद्ध करणी, मेरी जान, करो शुद्ध करणी,
निर्वाण तणी निशरणी, तुम तजो पराई परणी,
एक चित धरम ध्यान करणा रे ॥ ६ ॥

विद्यमान, तिथकर गणधर मन मा शुद्ध करणा,
पन पाग्धी कहे कल्याणी, जिया तवन वरना
वग्न गुन कीना मेरी जान बरन गुन कीना,
जमा अमत प्याना पीना एक दारण धरम का लीना,
गिरानचन्द्र गण कीना वरा नव तत्व का निरणा रे ॥७॥

श्री शान्तिनाथ भगवान

का

छन्द

शान्तिनाथ को कीज जाप काड भवा रा काटे पाप ।
शान्तिनाथ जा मोटा देव सुर नर सार जेहनी सेव ॥ १ ॥
दुख दारिद्र जाव दूर सुख सम्पत होवे भरपूर ।
गनफासी भट जाव भाग वलती होवे शीतल आग ॥ २ ॥
राज, नाक मा कीरति घणी शान्ति जिनेश्वर माथ धणी ।
जो ध्यावे प्रभुजी नो ध्यान राजा देव अधिको मान ॥ ३ ॥
गड गूवड पीडा मिट जाय दोखी दुश्मन लागे पाय ।
मघला भागो मन नो भम पामो समकित काटो कम ॥ ४ ॥
सुणो प्रभु मोरी अरदास, हूँ सेवक तुम पूरो आश ।
मुज मन चिंतित कारज करो चिंता आरति विघ्न हरो ॥ ५ ॥
मटो म्हारा आल जजाल, प्रभु मुजने तू नयण निहाल ।
आप नो कीरति ठामो ठाम प्रभुजी सुधारो म्हारा काम ॥ ६

जो नित नित प्रभुजी ने रटै, मोतियाविंद नै फुला कटै।
चेप लावण दोनो भड जाय, विण औखद कट जाव छाय ॥ ७ ॥
प्रभु नाम से आख निमल थाय धूंध पडल, जाला कट जाय।
कमला पीलो जल जल भर, शांति जिनेश्वर साता कर ॥ ८ ॥
गरमी व्याधि मिटाव राग सज्जन मित्र नो मिल सजोग।
एसा देव न दीख और नही चल दुश्मन का जोर ॥ ९ ॥
लूटारा सब जाव नाश, दुजन फीटी हाव दास।
शांतिनाथ की कारनि घणी कृपा करो तुम त्रिभवन धणी ॥१०॥
अरज करू छू जोडी हाथ आप सूं नही काइ छानी बात।
देख रह्या छो पोते आप काटो प्रभुजी म्हारा पाप ॥११॥
मुज मन चिंतित करिये काज राखो प्रभुजी म्हारी लाज।
तुम सम जग माही नही कोय तुम भजवा थी साता होय ॥१२॥
तुम पास चल नही मिरगी वाड ताव तेजरी म्हारा तोड।
मरी मिटाई कीधी सत तुम गुण ना नही आव अन्त ॥१३॥
तुमने समर साधु सती तुमने समर जोगी जती।
काटो सकट राखो मान, अविचल पद ना आपो स्थान ॥१४॥
सवत अठार चौराणु जाण, देश मालवो अधिक बखाण।
शहर जावर चातुरमास हूँ प्रभु तुम चरणा रो दास ॥१५॥
ऋषि रुघनाथ जी कीधा छन्द काटो प्रभु जी म्हारा फन्द।
हूँ जोवू प्रभुजी नी वाट, मुज आरति चिन्ता सब काट ॥१६॥

प्रयाण गीत

(तर्ज वृन्दावन का कृष्ण कन्हैया)

प्रभो ! तुम्हारे पावन पथ पर जीवन अर्पण है सारा
बढ चलें हम रुकें न क्षण भी हो यह दृढ संकल्प हमारा ।।ध्रु०।।
प्राणों की परवाह नहीं है प्रण को अटल निभायेंगे
नहीं अपेक्षा है औरों की स्वयं लक्ष्य को पायेंगे
एक तुम्हारे ही वचनों का भगवन ! प्रतिपल सबल सहारा।।१।।
ज्यों-ज्यों चरण बढेंगे आगे स्वतः मार्ग बन जायेगा
हटना होगा उसे बीच में जो बाधक बन आयेगा
रुक न सकेगी, मुड न सकेगी सत्य क्रान्ति की उज्ज्वल धारा।।२।।
आत्म शुद्धि का जहां प्रश्न है सम्प्रदाय का मोह न हो
चाह न यश की और किसी से भी कोई विद्रोह न हो
स्वर्ण विघर्षण से ज्यों सत्य निखरता संघर्षों द्वारा ।।३।।
आग्रह हीन गहन चिंतन का द्वार हमेशा खुला रहे
कण-कण में आदर्श तुम्हारा पय मिश्री ज्यों घुला रहे
जाग स्वयं जगायें जग को हो यह सफल हमारा नारा ।।४।।
नया मोड हो उसी दिशा में नई चेतना निखरे
तोड गिरायें जीर्ण शीर्ण जो अंध रूढियों के घेरे
आगे बढने का यह युग है बनना हमको स्वयं सहारा ।।५।।
शुद्धाचार विचार भित्ति पर हम अभिनव निर्माण करें
सिद्धान्तों को अटल निभाते निज पर का कल्याण करें
इसी भावना से भिक्षु का 'तुलसी' चमका भाग्य सितारा ।।६।।
बढ चलें हम रुक न क्षण भी, हो यह दृढ संकल्प हमारा ।

अणुव्रत प्रार्थना

तर्ज---उच्च हिमालय की चोटी
बड़ भाग्य है ! भगिनी व बन्धुओ, जीवन सफल
आत्म-साधना के सत्पथ में अणुव्रती बन
अपरिग्रह अस्तेय, अहिंसा सच्चे सुख के स
सुखी देख लो ! सत अकिंचन, सयम ही जिनव
उसी दिशा में दृढ निष्ठा से क्यों नहीं कदम
रहे यदि व्यापारी तो प्रामाणिकता रख
राज्य-कर्मचारी जो होंगे, रिश्वत कभी न
दृढ़ आस्था, आदर्श नागरिकता के नियम
गृहिणी हो गृहपति हो चाहे विद्यार्थी अध्या
वैद्य वकील शील हो सब में, नैतिक निष्ठा व्या
धर्म शास्त्र के धार्मिकपन का आचरणों में
अच्छा हो अपने नियमों से हम अपना सको
नहीं दूसरे वध व धन में मानवता की शा
यह विवेक मानव का निज गुण इसका गौरव
आत्म शुद्धि के आन्दोलन में तनमन अर्पण कर
कड़ी जाच हो लिये व्रतों में आच नहीं आने
भौतिकवादी प्रलोभनों में, कभी न हृदय लु
सुधरे व्यक्ति समाज व्यक्ति से, उसका असर राष्ट्र
जाग उठे जनजन का मानस ऐसी जागृति घर घ
तुलसी' सत्य अहिंसा की जय विजय ध्वजा फहरे

प्रवेशक अणुव्रती के ग्यारह नियम

१ चलने फिरने वाले निरपराध प्राणी की संकल्प पूर्वक घात नहीं करूँगा।
२ दूसरों की वस्तु को चोर वृत्ति से नहीं लूँगा।
३ किसी भी चीज में मिलावट कर या नकली को असली बता कर नहीं बेचूँगा।
   (क) दूध में पानी, घी में वेजिटेबल, आटे में सिगराज, औषधि आदि में अन्य वस्तु का मिश्रण।
   (ख) कलचर मोती को खरे मोती बताना, अशुद्ध घी को शुद्ध घी बताना आदि।
४ कूट तौल माप नहीं करूँगा।
५ महिने में कम से कम १० दिन ब्रह्मचर्य का पालन करूँगा।
६ वेश्या व परस्त्री गमन नहीं करूँगा।
७ जुआ नहीं खेलूँगा।
८ मत (वोट) के लिये रुपया न लूंगा और न दूँगा।
९ सगाई व विवाह के प्रसंग में किसी प्रकार के लेने का ठहराव नहीं करूँगा।
१० मद्यपान नहीं करूँगा।
११ भांग-गांजा, तम्बाकू आदि का खाने-पीने व सूंघने में व्यवहार नहीं करूँगा।

अणुव्रत प्रार्थना

तर्ज---उच्च हिमालय की चोटी से

बड़े भाग्य है ! भगिनी बन्धुओ, जीवन सफल बनाएं हम
आत्म-साधना के सत्पथ मे, अणुव्रती बन पाए हम ॥ ध्रुव ॥

अपरिग्रह अस्तेय, अहिंसा सच्चे सुख के साधन हैं।
सुखी देख लो ! सत अकिंचन, संयम ही जिनका धन है।
उसी दिशा में दृढ निष्ठा से क्यो नही कदम बढाए हम ॥१॥

रहें यदि व्यापारी तो प्रामाणिकता रख पायेंगे।
राज्य-कर्मचारी जो होंगे, रिश्वत कभी न खायेंगे।
दृढ आस्था, आदर्श नागरिकता के नियम निभाए हम ॥२॥

गृहिणी हो गृहपति हो चाहे विद्यार्थी, अध्यापक हो।
वैद्य वकील शील हो सब में, नैतिक निष्ठा व्यापक हो।
धर्म शास्त्र के धार्मिकपन को आचरणो मे लाएँ हम ॥३॥

अच्छा हो अपने नियमो से हम अपना सकोच करें।
नही दूसरे वध व धन मे मानवता की शान हरें।
यह विवेक मानव का निज गुण इसका गौरव गाए हम ॥४॥

आत्म शुद्धि के आन्दोलन में तन मन अर्पण कर देगे।
कड़ी जाच हो लिये व्रतो मे आच नही आने देंगे।
भौतिकवादी प्रलोभनो मे कभी न हृदय लुभाए हम ॥५॥

सुधरे व्यक्ति समाज व्यक्ति से, उसका असर राष्ट्र पर हो
जाग उठे जनजन का मानस, ऐसी जागृति घर घर हो।
'तुलसी' सत्य अहिंसा की जय विजय ध्वजा फहराएँ हम ॥६॥

प्रवेशक अणुव्रती के ग्यारह नियम

१ चलने फिरने वाले निरपराध प्राणी की सकल्प पूर्वक घात नहीं करूँगा ।
२ दूसरों की वस्तु को चोर वृत्ति से नहीं लूँगा ।
३ किसी भी चीज में मिलावट कर या नकली को असली बता कर नहीं बेचूगा ।
 (क) दूध में पानी, घी में वेजिटेबल, आटे में सिंगराज औषधि आदि में अन्य वस्तु का मिश्रण ।
 (ख) कलचर मोती को खरा मोती बताना, अशुद्ध घी को शुद्ध घी बताना आदि ।
४ कूट तोल माप नहीं करूंगा ।
५ महिने में कम से कम १० दिन ब्रह्मचर्य का पालन करूंगा ।
६ वेश्या व परस्त्री गमन नहीं करूंगा ।
७ जुआ नहीं खेलूंगा ।
८ मत (वोट) के लिये रुपया न लूंगा और न दूंगा ।
९ सगाई व विवाह के प्रसंग में किसी प्रकार के लेने का ठहराव नहीं करूंगा ।
१० मद्यपान नहीं करूंगा ।
११ भांग-गांजा, तम्बाकू आदि का खाने-पीने व सूंघने में व्यवहार नहीं करूंगा ।

श्रावक जीवन की पृष्ठ-भूमिका

इग्यारह नियम लो।

घट घट म अब जल्द जगावो, आत्म धम की लौ। इ०।
श्रावकपन की पृष्ठ भूमिका अब तयार करो ॥ इ० ॥ ध्रुवपद ॥

मानवता के भव्य भवन म खेल रहा प्राणी पशुपन मे।
हो मन म मद मस्त अम्त कर, अमित आत्मबल जो ॥इ०॥१॥

उज्वल म दिर म जो आये, कीडे दुर्गुण रूप रचाये।
क्या इस छूत राग को मानव पुरस्कार अब दो ॥इ०॥२॥

वीर पुत्र बन जा हि यटोरी, अपने जीवन मे कमजोरी।
देख होत दिल ग्लानी क्यो नही लज्जा से भुको ॥इ०॥३॥

नागपाश म ब धन टूटे, (ता) क्या नही बुरी शान्त छूटे।
अब भी पुरुषो म पौरुष है, एसी बात कहो ॥इ०॥४॥

नतिकता का ऊचा स्तर हो मानव मानवता म स्थिर हो।
'तुलसी' एसे सार्वजनिक —जीवन उत्थान चहो ॥इ०॥५॥

———

चेतन ! चिदानन्द चरणां में

(तर्ज—वृन्दावन का कृष्ण कन्हैया)

चेतन ! चिदानन्द चरणां म सब कुछ अरपण कर थारो।
सफल बणा सतसगत म मूधा मोलो मिनख जमारो ॥ ध्रुव ॥

खाली हाथा आया है तू, जासी खाली हाथा रे।
लारै रहसी इण दुनिया में जस अपजस री बाता रे॥
थोड जीणो रै खातर क्यू बाध शिर पापा रा भारो ॥ १॥

काड्या खाट महल हार मत, ओ हीरो लाखीणो रै।
विष मत घोल वासना रा, शान्त सुधा रस पीणो र।
अति भीणी परमारथ री पथ, तू है नश्वर तन स्यू न्यारो ॥२॥

भरयो अनन्त अखूट खजानो गाफिल थार घर म रे।
क्यू न निहारो, बार बार क्यू भटक दर-दर म र।
आग छिपी अरणी में ढूढ काठ काट मूरख कठियारो ॥३॥

एक नया पयो भी थार नही चालसी साग र।
करया आपरा कर्मा स्यू ही सुख-दु ख मिलसी आग रे।
मजम र माग पर चाल्या तुलसी निश्चित है निस्तारो ॥४॥

राम कहो रहमान कहो

रचयिता—आनन्दघन

राम कहो रहमान कहो, कोउ कान्ह कहो महादेव री ॥

निजपद रम राम सो कहिये, रहिमान् रहे मान री।
करख रूप कान्ह सो कहिये, महादेव निर्वाण री।।
परस रूप पारस सो कहिये-ब्रह्म चिन्ह है ब्रह्म हरि।
इहविधि साधो आप "आनन्द घन", चेतन मे निज कर्म मरि।।

नाहक नर वराग धरे हो

विषय-वासना न छूटत मन सें, नाहक नर वराग धरे हो।
जल म मीन पजे वशी म, जिह्वा के कारण प्राण हरे हो।
सो रसना वस किया बिन जोगी, नाहक जोग का साध मरे हो।।
वन मे रहे मृग निशि वासर काहु को नही दोष करे हो।
सो मुरली धुन सुण इण काने, व्याध बाण से प्राण हर हो।।
नयन कारण मरण पतगा, फरस फास गजराज पर हो।
नासा भँवरवा नास भए हैं पाचो ही रस से पाच मरे हो।।
कर जप दान तीरथ व्रत पूजा मुनि होकर ध्यान धरे हो।
लखमीपति तब लग सब भूठा जब लगि मन नही हाथ करे हो।।

पानी में मीन पियासी

पानी म मीन पियासी।
मोही सुन सुन आवे हाँसी ।।पानी०।।
आत्मज्ञान बिना नर भटकत काई मथुरा कोई कासी
कस्तूरी मग नाभी माँही वन वन फिरत उदासी ।।पानी०।।१।।
जल बिच कमल कमल बिच कलिया तापर भवर लुभासी।
विषयन वस त्रिलोक भयो सव, जती सती सन्यासी ।।पानी०।।२।।

जाका ध्यान धरत विधि हरिहर मुनिजन सहस अठ्यासी ।
सो तेर घट माँही विराजे परम पुरुष अविनासी ।।पा०।।३।।
भीतर का प्रभू जान्यो नाहि बाहर खाजन जासी ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, ना खाजे सा पासी ।।पा०।।४।।

निश दिन बरसत नन हमारे ।

सदा रहत बरसा रितु हम पर, जबसे श्याम सिधारे ।।
अजन थिर न रहत अखियन म, कर कपोल भये कारे
आचल पट सूखत नहि कबहूँ, उर बिच बहत पनारे ।।
ऊधौ तुम पाती ल आये बाँचे कौन हमारे ।
सूर सन्त अँखियन जल बरस पतियाँ बहि बहि जारे ।।

"साधो यहि विधि मन को लगावे"

साधो यहि विधि मन को लगाव मन के लगावे प्रभु पावे ।
जस नटवा चढ़त बाँस पर तालिया ढाल बजाव ।
अपना बाभ धरे सिर ऊपर सुरति वरत पर लावे ।।
जसे भुजग चरत बन माही ओस चाटने धाव ।
कबहूँ चाटे कबहूँ मनि चितव, मनि तजि प्राण गवावे ।।
जस कामिनि भरत कूप जल, कर छोड़ बतराव ।
अपना रँग सखियन सग राचे सुरति गगर पर लाव ।।
जस सती चिता पर चढ कर अपनी काया जरावे ।
मात पिता सब कुटुम्ब तियागे, सुरति पिया पर लावे ।।
धूप दीप नवध आरती सहज समाधि लगाव ।
कहत कबीर सुनो [illegible]ो, फेर जनम नहिं पावे ।।

साधो भजन भेद है न्यारा

क्या माला मुद्रा के पहिरे चन्दन घसे लिलारा।
मूड मुडाये जटा रखाये, अंग लगाये छारा॥
का पानी, पाहन के पूजे कन्द मूल फल हारा।
का सन्ध्या तरपण के कीन्हे, जो नहिं तत्व विचारा
कहा नमे तीरथ व्रत कीन्ह, का पट धर्म अचारा॥
का गाये का पढ़ि दिखलाये, का भरमे संसारा।
जसे बधिक ओट टाटी की हाथ लिये विष चारा।
त्यों बक ध्यान धरे घट भीतर मन अंग भरया विकारा॥
दे परचा स्वामी हो बठे करे विषम व्यौहारा।
ज्ञान ध्यान को मरम न जाने वाद करे हंकारा॥
गहिर गम्भीर अखण्ड अनन्ता गड गड करि डारा।
अगम अपार चलन को सहज, घट भरम ते जारा॥
निमल बिमल आतमा जाकी, साहब नाम अधारा।
कबीरा राम मिलै वाको जो मैं तज उस पारा॥

भोर भयो उठ जागो मनुवा

(राग भैरव—तीन ताल)

भोर भया उठ जागो मनुवा साहेब नाम सभारो।
। भो० ॥टेक॥
सूताँ सूता रयन विहानी अब तुम नीद निवारो॥
मंगलकारि अमृतवेला, थिर चित्त काज सुधारो॥१॥
खिनभर जो तु याद करेगो, सुख निपजेगो सारो॥
वेला बीत्या हे पछतावा, क्यु कर काज सुधारो॥२॥

पछ्यापरे दिवस वितायो रात नींद गमायो ॥
इन बिध निधि चरित्र आदर, नानानंद रमायो ॥२॥

जो नर दुख में दुख नहीं मानै

सुख सनेह अरु भय नहीं जाके कंचन माटी जाने ॥१॥
नहिं निंदा नहिं अस्तुति जाके लोभ मोह अभिमाना ।
हरख सोक तें रहै नियारो नहिं मान अपमाना ॥२॥
आसा मनसा सकल त्यागि के जग तें रहै निरासा ।
काम क्रोध जेहि परसै नाहिन तेहि घर ब्रह्म निवासा ॥३॥
गुरु किरपा जेहि नर पर कीन्ही तिन यह जुगति पिछानी ।
नानक लीन भयो गोबिंद सं ज्यों पानी संग पानी ॥४॥

"त्याग न टके रे वैराग विना"

(राग सारंग—रूपचंदी ताल)

त्याग न टके रे वैराग विना करीए कोटि उपाय जी ।
अंतर ऊंडी इच्छा रहे ते केम करीने तजाय जी ।ध्रुव०।
वेष लीधो वैरागनो देश रही गयो दूर जी ।
उपर वेष अच्छो बन्यो माही मोह भरपूर जी ॥१॥
काम, क्रोध, लोभ, मोहनु ज्यां लगी मूळ न जाय जी
संग प्रसंग पांगरे जोग भोगनो थाय जी ॥२॥
उष्ण रते अवनी विषे बीज नव दीसे बहार जी ।
घन वर्षे वन पांगरे, इंद्रिय विषय आकार जी ॥३॥
चमक देखीने लोह चले इंद्रिय विषय संजोग जी ।
अण भेटे रे अभाव छे भेटे भोगवशे भोग जी ॥४॥

उपर तजे ने अतर भजे, एम न सरे अरथ जी।
वणश्यो रे वणाश्रम थकी, अते करशे अनरथ जी ॥५॥
भ्रष्ट थयो जोग भोग थी, जेम वगडयु दुध जी।
गयु घत मही माखण थकी, आप थयु रे अशुद्धजी ॥६॥
पलमा जागी ने भोगी पलमा, पलमा गही न त्यागी जी।
'निष्कुलानद ए नरना, वण समज्या वराग जी ॥७॥

ज्या लगी आतम तत्त्व चीन्यो नहीं

ज्या लगी आतम तत्त्व चान्या नही, त्या लगी साधना सवभूठी।
मानुषादेह तारा एम एले गया मावठानी जेम वृष्टि वूठी॥
शु थयु स्नान पूजा ने सेवा थकी शु थयु घेर रही दान दीभ।
शु थयु धरी जटा भस्म लेपन कर्ये ? शु थयु वाल लोचन कीधे ?
शु थयु तप ने तीरथ कीधा थकी, शु थयु माल ग्रही नाम लाध ?
शु थयु तिलक ने तुलसी धार्या थकी, शु थयु गगजल पान कीध ?
शु थयु वद याकरण वाणे वधे शु थयु रागने रग जाण्य ?
शु थयु खट दरशन सव्या थकी, शु थयु वरणना भेद माण्ये ?
ए छ परपच सहु पट भरवा तणा, आतमाराम परिब्रह्म न जाया,
भणे नरसया क तत्त्वदर्शन बिना रत्नचितामणि जन्म खोया॥

वष्णव जन तो तेने कहिए

वष्णव जन तो तेह्ने कहिए जे पीड पराई जाणे रे।
पर दुखे उपकार करे ताए मन अभिमान न आणे रे ॥१॥
सकल लोक मा सहु ने वन्दे निंदा न कर केहनी रे।
वाच काछ मन निश्चल राखे धन धन जननी तेहनी र ॥२॥

समदृष्टि न तृष्णा त्यागी परस्त्री जेहने मात रे।
जिह्वा थकी असत्य न बोले, पर धन नव झाले हाथ रे ॥३॥
मोह माया व्यापे नहीं जेने दृढ वैराग्य जेना मन मां रे।
राम नाम सु ताली लागी, सकल तीरथ तेना मन मां रे ॥४॥
विन लोभी ने कपट रहित छे काम क्रोध निवार्या रे।
भणे नरसैयो तहेना दरसन करतां कुल एकोत्तर तार्या रे ॥५॥

जैनी जन तो तेने कहिये

(तर्ज—वैष्णव जन ले० गणेशमल दूगड "विशारद")

जैनी जन तो तेने कहिये जे जीते राग ने द्वेषो रे।
सुख दुःख मां समभाव रहे, जे समता प्राण निरोपो रे ॥ १ ॥
सत्य तत्व नो परम पुजारो, तीन जोग ब्रह्मचारी रे।
पर धन ने पत्थर जिम जाणे लोभ तृष्णा वारी रे ॥ २ ॥
सहु प्राणी आतमवत् बूझे भ्रातृभाव विकसावे रे।
अभय दान आपे सब जग ने कलुष भाव नहीं लावे रे ॥ ३ ॥
क्रोध शमे अरु दमे मान ने चित्त सरलता जेने रे।
लोभ क्षोभ करनारो जान, किम दुःख थाये तेने रे ॥ ४ ॥
विनयमूल धर्म मां राच्यो, ज्ञान गहे जे साचो रे।
कथनी करणी एक सरीखी वीरो जीणो आज्ञा रे ॥ ५ ॥
नव तत्व छव द्रव्य पिछाण्या, सावद्य निरवद्य जाण्या रे।
सरध्या और आदरया गुण ने, ते तो जन सयाणा रे ॥ ६ ॥
जयणायुत जीणो है जिणरो खाण पीण उठ बठो रे।
बोल चाल साणा तिमहिज, ते मुक्ति मार्ग मे पठो रे ॥ ७ ॥
संयम ही जीवन है जेने, भाग राग सम जाण्या रे।

हाथ पर वाणी रु इन्द्रिय, महु सजम म आण्या रे ॥ ८ ॥
वरतय भाव निर तर सवे, त्याग भाव म सठो रे।
ज्ञान क्रिया इकनार बनाव (वो) जन तत्व मा पठा रे ॥ ९ ॥

अपूर्व-अवसर

अपूर्व अवसर एवा क्यारे आवशे
क्यारे थइशु बाह्याभ्यतर निर्ग्रन्थ जो।
सर्व सम्बन्ध नु बन्धन तीक्ष्ण छेदी ने
विचरशु कव महत्पुरुष ने पथ जो ॥अपूर्व०॥१॥
सर्व भाव थी औदासीन्य वत्ति करी
मात्र देह ते सयम हेतु होय जो।
अन्य कारणे अन्य कशु कल्पे नहीं,
देहे पिण किंचित् मूर्च्छा नव जोय जो ॥अपूर्व०॥२॥
आत्म स्थिरता त्रण सक्षिप्त योग नी,
मुख्यपणे तो वरते देह पर्यन्त जो।
घोर परीषह के उपसर्ग भये करी
आवी सके नहीं ते स्थिरता नो अन्त जो ॥अपूर्व०॥३॥
सयम ना हेतु थी योग प्रवर्तना,
स्वरूप लक्षे जिन आज्ञा आधीन जो।
ते पण क्षण क्षण घटती जती स्थिति मा,
अन्ते थावे निज स्वरूप मा लीन जो ॥अपूर्व ॥ ४ ॥
पञ्च विषय मा राग द्वेष विरहितता
पञ्च प्रमादे न मले मन ने क्षोभ जो,
द्रव्य क्षेत्र ने काल भाव प्रतिबन्ध वण,
विचारवु उदयाधीन पण वीतलोभ जो ॥अपूर्व०॥५॥

क्रोध प्रत्ये तो वर्ते क्रोध स्वभावता,
मान प्रत्ये तो दीनपणानु मान जो
माया प्रत्ये माया साक्षी, भाव नी,
लाभ प्रत्ये नहीं लाभ समान जो ॥अपूर्व०॥ ७॥
बहु उपसर्ग कर्ता प्रत्ये पण क्रोध नहीं,
वंदे चक्री तथापि न मले मान जो।
देह जाय पण माया थाय न रोम मा,
लाभ नहीं छो प्रबल सिद्धि निदान जो ॥अपूर्व०॥ ८॥
नग्न भाव मुंड भाव सह अस्नानता
अदन्त धावन आदि परम प्रसिद्ध जो।
केश रोम नख के अंग शृङ्गार नहीं,
द्रव्य भाव संयम मय निर्ग्रन्थ सिद्ध जो ॥अपूर्व०॥ ९॥
शत्रु मित्र प्रत्ये वरते समदर्शिता,
मान अमाने वरते तेज स्वभाव जो।
जीवित के मरणे नहीं न्यूनाधिकता,
भव मोक्ष पण शुद्ध वर्ते समभाव जो ॥अपूर्व०॥१०॥
एकाकी विचरता वली स्मसान मा,
वलि पवन मा वाघ सिंह संयोग जो।
अडोल आसन ने मन मा नहि क्षोभता
परम मित्र ना जाणे पाम्या योग जो ॥अपूर्व०॥११॥
घोर तपश्चर्या मा पण मन न ताप नहीं
सरस अन्ने नहीं मन ने प्रसन्न भाव जो।
रजकण के ऋद्धि वैमानिक देव नी
सर्वे माया पुद्गल एक स्वभाव जो ॥अपूर्व०॥१२॥
[illegible] पराजय [illegible] नो
आवु त्या ज्या [illegible] भाव जो।

नणी गाव तणी वरी ने भ्रान्तता
अनन्य चितन अतिशय शुद्ध स्वभाव जो ॥अपूर्व०॥१३॥
माह स्वयम्भू रमण-समुद्र तरा करी,
स्थिति त्या ज्यां क्षीण मोह गुणस्थान जो।
अन्त समय त्यां पूर्ण स्वरूप वीतराग थई,
प्रगटावु निज केवल ज्ञान निधान जो ॥अपूर्व०॥१४॥
चार कर्म घन घाती ते व्यवच्छेद ज्यां,
भव ना बीज तणो आत्यन्तिक नाश जो।
सर्व भाव ज्ञाता द्रष्टा सह शुद्धता
कृतकृत्य प्रभु वीर्य अनन्त प्रकाश जो ॥अपूर्व०॥१५॥
वेदनीयादि चार कर्म वर्ते जिहां,
बली सींदरावत् आकृति मात्र जो।
ते देहायुष आधीन जेनी स्थिति छे,
आयुष पूर्णे मटिये दैहिक पात्र जो ॥अपूर्व०॥१६॥
मन वचन काया ने कर्म नी वर्गणा
छूटे जिहां सकल पुद्गल सम्बन्ध जो।
एवुं अयोगि गुणस्थानक त्यां वर्ततु
महाभाग्य सुखदायक पूर्ण अबन्ध जो ॥अपूर्व० १७॥
एक परमाणु मात्र नी मले न स्पर्शता
पूर्ण कलङ्क रहित अडोल स्वरूप जो।
शुद्ध निरंजन चैतन्यमूर्ति अनन्यमय,
अगुरुलघु अमूर्त सहज पद रूप जो ॥अपूर्व० १८॥
पूर्व प्रयोगादि कारण ना योग थी,
ऊर्ध्वगमन सिद्धालय प्राप्त सुस्थित जो।
सादि अनन्त अनन्त समाधि सुख माँ
अनन्त दर्शन ज्ञान अनन्त सहित जो ॥अपूर्व० १९॥

जे पद श्री सर्वज्ञे दीठुं ज्ञानमां,
कही शक्या नहीं पण ते श्री भगवान जो ।
तेह स्वरूप ने अन्य वाणी ते शुं कहे
अनुभव गोचर मात्र रह्युं ते ज्ञान जो ।।अपूर्व० २०।।
एह परमपद प्राप्तिनुं कर्युं ध्यान में
गजा वगर ने हाल मनोरथ रूप जो ।
तो पण निश्चय राजचन्द्र मन ने रह्यो,
प्रभु आज्ञाये थाशुं तेज स्वरूप जो ।।अपूर्व २१।।

आत्मसिद्धि शास्त्र

जे स्वरूप समज्या विना पाम्यो दुःख अनंत ।
समजाव्युं ते पद नमुं श्री सद्गुरु भगवंत ।।१।।
कोई क्रियाजड थई रह्या शुष्क ज्ञानमां कोई ।
माने मारग मोक्षनो करुणा उपजे जोई ।।३।।
आत्मादि अस्तित्वना जेह निरूपक शास्त्र ।
प्रत्यक्ष सद्गुरु योग नहीं त्यां आधार सुपात्र ।।१३।।
अथवा सद्गुरु ए कह्यां जे अवगाहन काज ।
ते ते नित्य विचारवां करी मतांतर त्याज ।।१४।।
नहीं कषाय उपशांतता नहीं अंतर वैराग्य ।
सरल पणुं न मध्यस्थता ए मतार्थी दुर्भाग्य ।।३२।।
कषायना उपशांतता मात्र मोक्ष अभिलाष ।
भव-खेद प्राणीदया त्यां आत्मार्थ निवास ।।३८।।
राग द्वेष अज्ञान ए मुख्य कर्मनी ग्रंथ ।
थाय निवृत्ति जेहथी, तेज मोक्षनो पंथ ।।१००।।
छूटे [illegible] तो, नही कर्ता तू कर्म ।

नही भास्या तृ तहल, ए ज धम ना मम ॥११४॥
सुद्ध बुद्ध, चत य प्रन स्वय ज्याति सुखधाम।
बीजू कहिये क्टलू कर विचार ता पाम ॥११७॥
गच्छ, मतनी ज कल्पना ते नही सद्व्यवहार।
भान नहीं निज रूप नु, ते निश्चय नहि सार ॥१३३॥
आगल ज्ञानी थई गया, वतमानमा होय।
थाग काल भविष्यमा माग भेद नही काय ॥१३४॥
मुखथी ज्ञान कथे अने अतर छूटया न मोह।
त पामर प्राणी करे मात्र ज्ञानाना द्रोह ॥१३७॥
देह छता जनी दशा वर्ते देहातीत।
ते ज्ञानीना चरण मा हो ! वन्दन अगणित ॥१४२॥

बारह भावना

(१) अनित्य भावना

राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी अपनी बार॥

(२) अशरण भावना

दल बल दवी दवता, मात पिता परिवार।
मरती बिरियाँ जीव को, कोई न राखनहार॥

(३) ससार भावना

दाम बिना निधन दुखी, तृष्णा वश धनवान।
कहू न सुख ससार मे जब जग देख्यो छान॥

(४) एकत्व भावना

आप अकेला अवतरे, मरे अकेला होय।
या कबहू या जीव का, साथी सगो न कोय॥

(५) अन्यत्व भावना

जहा देह अपनी नही तहा न अपना काय।
घर सम्पति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय॥

(६) अशुचि भावना

दाप चाम चादर मढी हाड पिंजरा देह।
भीतर या सम जगत म, और नहा घिन गह॥

(७) आश्रव भावना

जगवासी घूम सदा, माह नाद व जोर।
तव दीस नही नूटता कम चार चहु ओर॥

(८) सवर भावना

मोह नीद जब उपगमे, सतगुरु देय जगाय।
कम चोर आवत रुकें, तब कुछ बने उपाय॥

(९) निजरा भावना

ज्ञान दीप तप तल भर, घर शोध भ्रम छोर।
या विधि बिन निकसे नही पठ पूरव चोर॥
पच महाव्रत सचरण समिति पच प्रकार।
प्रबल पच इन्द्रिय विजय धार निजरा सार॥

(१०) लोक भावना

चौदह राजु उतग नभ लोक पुरुष सठान।
तामे जीव अनादि तें, भरमत है बिन ज्ञान॥

(११) बोधि दुर्लभ भावना

धन जन कंचन राज सुख, सबहि सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक यथारथ ज्ञान॥

(१२) धर्म भावना

जाँचे सुरतरु देय सुख, चिन्तित चिन्ता रैन।
बिन जाँचे बिन चिन्तये, धर्म सकल सुख दैन॥

मेरी भावना

जिसने राग द्वेष कामादिक, जीते सब जग जान लिया।
सब जीवों को मोक्ष मार्ग का निस्पृह हो उपदेश दिया॥ १॥
बुद्ध वीर जिन, हरि हर ब्रह्मा या उसको स्वाधीन कहो।
भक्ति भाव से प्रेरित हो यह चित्त उसी में लीन रहा॥ २॥
विषयों की आशा नहिं जिनके साम्य भाव धन रखते हैं।
निज पर के हित साधन में जो, निश दिन तत्पर रहते हैं॥ ३॥
स्वार्थ-त्याग की कठिन तपस्या बिना खेद जो करते हैं।
ऐसे ज्ञानी साधु जगत के दुख समूह को हरते हैं॥ ४॥
रहे सदा सत-संग उन्हीं का, ध्यान उन्हीं का नित्य रहे।
उन ही जैसी चर्या में यह चित्त सदा अनुरक्त रहे॥ ५॥
नहीं सताऊं किसी जीव को झूठ कभी नहिं कहा करूं।
पर धन वनिता पर न लुभाऊं संतोषामृत पिया करूं॥ ६॥
अहङ्कार का भाव न रक्खूं नहीं किसी पर क्रोध करूं।
देख दूसरों की बढ़ती को, कभी न ईर्ष्या भाव धरूं॥ ७॥

रहे भावना ऐसी मेरी सरल सत्य-व्यवहार करूं।
बने जहां तक इस जीवन में, औरों का उपकार करूं ॥८॥
मैत्री भाव जगत में मेरा सब जीवों पर नित्य रहे।
दीन दुखी जीवों पर मेरे, उर से करुणा स्रोत बहे ॥९॥
दुर्जन क्रूर कुमार्गरता पर, क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्यभाव रक्खूं मैं उन पर ऐसी परिणति हो जावे ॥१०॥
गुणीजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहां तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे ॥११॥
होऊं नहीं कृतघ्न कभी मैं द्रोह न मेरे उर आवे।
गुण ग्रहण का भाव रहे नित दृष्टि न दोषों पर जावे ॥१२॥
कोई बुरा कहो या अच्छा लक्ष्मी आवे या जावे।
लाखों वर्षों तक जीऊं या मृत्यु आज ही आ जावे ॥१३॥
अथवा कोई कैसा ही भय या लालच देने आवे।
तो भी न्याय मार्ग से मेरा कभी न पग डिगने पावे ॥१४॥
होकर सुख में मग्न न फूले दुख में कभी न घबरावे।
पर्वत नदी श्मशान भयानक अटवी से नहीं भय खावे ॥१५॥
रहे अडोल अकम्प निरन्तर यह मन दृढ़तर बन जावे।
इष्ट वियोग अनिष्ट योग में सहनशीलता दिखलावे ॥१६॥
सुखी रहें सब जीव जगत् के कोई कभी न घबरावे।
बैर पाप अभिमान छोड़ जग नित्य नये मङ्गल गावे ॥१७॥
घर घर चर्चा रहे धर्म की, दुष्कृत दुष्कर हो जावें।
ज्ञान चरित उन्नत कर अपना मनुज जन्म फल सब पावें ॥१८॥
ईति भीति व्यापे नहिं जग में वृष्टि समय पर हुआ करे।
धर्मनिष्ठ होकर राजा भी, न्याय प्रजा का किया करे ॥१९॥

रोग मरी दुर्भिक्ष न फलै, प्रजा शान्ति से जिया करे।
परम अहिंसा धर्म जगत में फल सब हित किया करे ॥२०॥
फैले प्रेम परस्पर जग में, मोह दूर पर रहा करे।
अप्रिय कटुक कठोर शब्द नहिं कोई मुख से कहा करे ॥२१॥
बन कर सब युग वीर हृदय, से धर्मोन्नति रत रहा करें।
वस्तु स्वरूप विचार खुशी से सब दुख संकट सहा करें ॥२२॥

"संकट मोचन हार"

(तर्ज—रघु सुमरोग राम—ले० श्रीमती मोहिनी देवी सिंघवी)

तुम बिन कौन करेगा पार ?
तुम ही पार लगावन हारे संकट मोचनहार ॥ध्रुवपद॥
तीनों के प्रति पालक हो तुम सत्यमार्ग संचालक हो तुम।
धर्म जगत के मालक हो तुम मम जीवन आधार ॥१॥
मात पिता भगिनी सुत नारी स्वार्थ की है दुनियाँ सारी।
निःस्वार्थ प्रभु तुम उपकारी करदो बेड़ा पार ॥२॥
एक ही आश लगी है मन में, ध्यान धरूं तेरा क्षण क्षण में।
रहे सदा आनन्द जीवन में 'मोहिनी' करे पुकार ॥३॥

आत्म चिन्तन ध्यान

(स्व० श्री कमचन्द जी स्वामी कृत)

[प्रथम परम शासन चिरकारि पद्ध मनचिर करि विष कषायकी चितनी लहर मिटाय न अन्न करण से इस तरह ध्यावणो —]

नमस्कार थावो श्री अरिहन्तजीन !

ते अरिहन्त जी केहवा छ ?

सुरासुर सवितचरण कमल । सवज्ञ । भगवन जगनाथ । जगजीवा नां तारक । सुगत मारग निवारण । निवाण मारग पमाटण । निराह निरहङ्कार । नि सङ्ग, निमम । शात दात करुणा समुद्र । क्षिमाचपगार सागर । अनन्तज्ञान दशन चारित्र गुण नो आगर । एक सहस्र अष्ठ लक्षणा ना धारण हार । चौतीस अतिशय पतीस वाणी गुण सहित । समुद्रनी पर गभीर । मरुनी पर धीर । चद्रमा जिसा निमल । सूय सरीषा तप तजवत । कि बहुना धम ना मूर्ति । एहवा प्रभु निमले । जोग मुद्रा साधि । सकल कम खपाई । सव कारज सारि, सिद्ध थया ।

ते सिद्ध भगवान क हवा छ ?

सकल कम बन्ध रहित थई । ते मना बलबलिभूत । ससार ना जन्म मरण । राग शोक चिन्ता । शारीरिक मानसिक दुख थकी छुटा । काम कषाय रूप अग्नि वैराग उपशम जल स्यु उलहवी नै । शीतलीभूत थया । निम्मल अक्षय, अजर अमर । परमान द प्राप्तथया । अनन्त केवल ज्ञान १ केवल दशन २ आत्मिक सुख खायक सम्यक्त्व ४ अटल अमर्तिभाव नयभाव ७ अन्तराय रहित ८

सहित सिद्धजी लोकालोक ना स्वरूप देखी रहा छे। परमसुखी थया छे। एवा सिद्धजी भगवान ने म्हारो नमस्कार थावो।
रे जीव ! जेहवो सिद्ध परमात्मा नो सरूप छ, तेहवो ताहरा चेतानन्द ना सरूप सत्ता म छै। रे चेतानन्द ! ताहरो सरूप कर्मा आछ्यो छै। मोहन उदय मलीन होय रह्यो छ। निज सरूप भूलि पर सरूप म रम रह्यो छ। क्रोध म। मान म। माया म। लोभ मे। राग म। द्वेष म। हास। रति अरति। भय। शोक। दुगञ्छा। वेद विकार म वरत रह्या छ।
कर्म वश नरकादि। च्यार गत चौरासी लाख जीव योनि म। कुमार न चाकनी पर परिभ्रमण करि रह्या छ।
भूख तृषा शीत ताप दुख, शोक ऊंच नीच पणो पामि रह्या छ। चवदह राजलोक म जनम मरण करि पुरि।

गाथा

नसा जाई, न सा जोणी, नत ठाण नत कुल।
न जाया न मुवा जच्छ सव्व जीव अनन्त सो ॥

रे जीव ! तू हिंसा झुठ चोरी मथुन, परिग्रह जाव मिथ्या दर्शन सल्य ए सेवि, पाप उपारजि आत्मा भारी करि नर्के गयो।

ते नर्क केहवो छै ?

महा घोर रुद्र अधकार सहित विहामणो छै।
तिहां वेदना केहवी भागवी ?

नरकपाल परमाधामी कुम्भी म पचाव्यो। भल रहित चिताग होमव्यो। भाभर म भाडव्यो। चणानी पर सेकव्यो। अगन वर्ण लोह रथ जुसरा खाँध दई मारया। अगन वर्णी धरती उपर भाला स्यु भेदि चलायो। यन्त्र म पीलव्यो। मुग्दर कूटी चूर्ण

उतारि क्षार सींचव्या । शूली आरपाया । सुयानी मन्या म सुवाय न रानव्या । कृत्वत चढाव्या । निविद बन्धन बांधि वृक्ष नट माव्या । इसी क्षत्र वन्ना उपजावी । वतरना नदी ना पानी, ताना तला मरीपा निगम हाम्या । कलकलता मूह फान पाव्यो । नगरपाल श्वान स्पवरि जीण वस्त्र नी पर फाम्यो । सिंह स्पवरि विदारया । हस्ती स्पवरि तरणा मर्या । सप स्पवरि चिहूँ दिशा टलया । अनन्ती भूख तथा शात ताप परवमपण जघन्य १० हजार वर्ष उत्कृष्ट ३३ सागर पृथ्वी वन्ना अनन्ती वार भागवी । वलि पृथ्वीकायम गया तिहां असंख्याता भव किया । असंख्याती अवसर्पिणि उत्सर्पिणिलग मृणीज्या सुदीज्या दुःख भोगव्या । एवम अप्पम तउम वाउम वनस्पति म गया । तिहां अनन्ता भव किया । सूक्ष्म बादर प्रत्येक साधारण म । अनन्ती अवसर्पिणि । क्षेत्र थकी अनन्तालोकाश प्रमाणे । असंख्याता पुद्गलपरावर्तन तांई रह्यो ।

निगोद में गया, तिहां आंगुल न असंख्यातवे भाग मात्र, एक शरीर म अनन्ता भेद अनन्ता जीव रहे छ । तिहां रहि नै, पृथ्वी सकनाई भोगवा । एक मुहूर्त मध्ये ६५००० पांसठ हजार ५०० पांच सौ ३६ छत्तीस भव कर । एहवी जनम मरण नी वेदना भोगवी । छेदन भेदन पामी ।

वलि बेन्द्री तेइन्द्री चौइन्द्री म वासा भवकिया । अनेक दुःख भोगव्या ।

वलि तिर्यच पचेन्द्री म—जलचर थलचर उरपर भुजपर खेचर म नाना भव किया । शस्त्र थकी मुवो । भूख तृषा, वध बन्ध, परवशादि अनेक दुःख भोगव्या । वलि इम स्नत स्लत घणा कष्ट कर्ता जो मनुष्य जन्म पायो तो नव मास तांई गर्भना

दु ग सह्या । प्रथम उत्पत्ति समय पिता ना वीय माता नों रुद्र नो आहार लेइन शरीर वाध्यो । नीचा मस्तक, ऊँचा पग मल-मूत्र की दुगध सकडाई नी भाकसी म रह्यो ।

साढा तीन क्रोड रोम रोम सुई ताती, अगाग्रणि एक निरा जन्म्या बालक र रोम रोम मे चाप, तेहन वेदना हुव, तहथी आठ गुणी वेदना गभ म वसना । जन्मता क्रोड गुणी हुव । एहवी वेदना भागविर जन्म्यो ।

जन्म्या पछ बालपण माता पिता नो विजोग पडया । वलि जोवन म महाप्राणवल्लभस्त्रीपुत्रादिना विजोग पडयो । इष्ट-निजोग अनिष्ट सयोग सह्या । वलि सास, खांस, जरा, दाह अन भगन्दरादि अनेक व्याधि ना कष्ट सह्या ।

वलि वृद्धपण अनेक परवशपण दु ख भागव्या ।

र जाव ? एहवा दु ख अनेक सहिन भूल गयो । र जीव ?

कदाचित पूर्वे पुन्य उपार्जि मिनग भव पाई जोवन पामि गव म छकी रह्यो छ जिम माखी मल म लिपटी निमतू सनेहम लिपटि रह्यो छ जीव ! तू किणस्यु सनेह करै छ ? तू केहनो नही । (गाथा) पुरसा तुम्मव तुम्मीत ' हे पुरष ! ताहरा तू हीज मित्र छ । तू बाहिर मित्र किसू वछे छ । (गाथा) ' मीत मीत्तमी, अपाक्ता निकताय इत्यादि । अहो जीव ! ए ताहरी आतमा न कर्मा री कर्त्ता । एहिज भुगतता । एहिज विसेरता । एहिज दु खनी दाता । एहिज सुखनी दाता । एहिज वरी । एहिज मित्र । एहिज पर उपकार नी करणहार तिणस्यूं नान दशन चारित्र सहित आमा ऊपर परम प्रतीति राखिये ए टालि नै किणही सचित अचित वस्तु ऊपर स्नेह न करिवो । (गाथा) ' असिणेह सिणह करण जे आप स्यु स्नेह कर छ । ताहस्यु पिण निस्नेहपणे रहवो । ए केवला नो वचन छ । वलि कह्यो छै ।

(गाथा) 'स्नेह पासा भयकरा । ए स्नेह रूप पासा महाभयना करणहार छ । तिणस्य, व जीव ! वितराग ना वचन रिमातिनू विणस्यु ही स्नेह मत कर । जगत ना सब जावा स्यु ताहरे पूर्वे एक एक स्यु मनता सगपण किया । इम जाणा राग टालिमे । र जीव ? तू ताहरा निज गुण सिहाल । ताहरा निज गुण ता ज्ञान, दर्शन चारित्रादि छ । निजगुण गुप्तटालि । बाहिर पुद्ग लीक काम भोगना सुख ता अथिर छ । मिथ्यना सुख ता असार छ । स्त्री पुरुष नी काया महा असुच अपवित्र लाही-हाड माग ना घर । मल मत्र भर्या । मल संचार वमन पित्तनो सागर । अधम, अनित्य । असासता सडनागलन । विघसण । धमक्षीण । मसूरदाची माटीना भाजनी पर । ऊपरस्युराग कर । था धन रिधमर धार लेकर नष धन मार काढि सिद्धपया ।

र जीव ? एह स्त्री सम्बं धया काम भोग अथिर छ जहवा बिजलीरा चमत्कार । सध्या ना भान । पनङ्गानाग्ग । डाभ अणी जल बिन्दुना अथिर छ तिम तन धन जावन अथिर छ । (गाथा) सव्वविल वायगीय इत्यादि सव गीत --विलापात समान छ । सब गहणा-त भारभूत समान छ । सब नाटक ते विटम्बणा समान छ । सब विषय सुख न दुगत ना दातार छ । बाल अविवेका जीवन रति उपजावणहार छ । ज्यू पाज रागी न खाज मीठी लाग जिम जहर चढ नै नीम पान मीठा लाग । ज्यू जीव र प्रबल मोह उदय स तेहन एकाम भोग मीठा लाग छ ।

वलि जहवा किम्पाकफल दासता सु दर सुग ध, खाता मीठा अमृत सरीखी लाग, पिण माहि परणम्या जीव काया जदा-जुदा हुव ज्यू इंद्रा नाम रूप, रस, ग ध फस काम भोग स्त्रियादि ना जीव न सवता माठा लाग । तेहना फल परभव म अ कडवा लग ।

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती नो घर ।

ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती पूर्व भव चारित्र पालि ने, तप करि चक्री सनत्कुमार नी रिद्धि देखिने निहाणा किया वास्ते चक्रवर्ती थयो। षट खण्ड में आणा वरताई। तेहने ८४ (चौरासी) लाख हाथी ८४ (चौरासी) लाख घोड़ा ८४ (चौरासी) लाख रथ ९६ (छिनवे) क्रोड़ पायक २५ (पच्चीस) हजार देवता, ३२ (बत्तीस) हजार मुकुटबन्ध राजा सेवा करे। नव निधान। चवदह रतन। २० वीस हजार सोने रूपा आगर। ४२ (बयालीस) भोमिया देवता ना निपाया रतन जड़ित महलायत १६२ (एक लाख ब्यानवे हजार) मनोहर रूपवंत अन्तेवर पटरानी। श्रीदेवी-उत्कृष्ट रूप लावण्य योवन नी धरणहार। मनोहर भूषण वेशनी धरणहार। मितपनी अपछरा। सिणगार नो घर सुकुमाल शरीर नी धरणहार परमरति विलास नी उपजावणहार। सव ऋतुमे सुखदायिनी तेहना शरीर फर्से राग उपशमे। एहवास्नी सघाते सुख भोगवी। छ खण्ड नो राज्य भोगवि सात सौ वर्ष नो आउषा पालि। कर्म उपार्जि सातवीं नर्क, तेतीस सागर ने आउषे गयो।

सात से वर्षां में २८०० (अठाइस सौ) क्रोड़, ५२ (बावन) क्रोड़ ३८ (अड़तीस) लाख ८० (अस्सी) हजार सास उश्वासलिया एक एक सासोसास उपर नारकानी मारकेहवी ? ११ (इग्यारह) लाख पल ५६ (छप्पन) हजार पल ९०० (नौ सौ) पल २५ (पच्चीस) पल एक पल नो तीजो भाग जाभेरा। एतली वेदना भोगव्या, एक सासोसामना सुखा नी करमानीफारगती होवे। रे जीव ? एहवा खिणमात्र ना सुख। अने बहु काल नादुख। रे जीव ? तू देवलोक गयो। तिहाएहवा सुख भोगव्या। रतन जड़त महलायत। पाँच सौ योजन चिहुँ दिशि बाग महारलिया

मणा हजार सूरज थकी पिण तेज ते महलां ना उद्योत घणा। वक्रिय शरीर महा सुन्दर। अदभुत रूप ज्याति क्रांति नाधणी। महा सावित व त। इच्छित रूप करवा समय। पहले देवलोकनोय सागर ना आउषो देवता नो। एक स्वतार आठ स्वागना। एकेकी दवी। सोलह सोलह हजार महा अदभुत अचरजकारी जोत श्रात मनोहर वेश लावण्य यावत नी धरणहार। सिणगार ना घर। रहवा उत्तर वक्रिय रूप वक्रिय करे। एतना। रूप दवना तर। ते देवी वनली भोगव। २२ (बाईस) ओड. आड ८५ (पचासी) लाख आड ७१ (इकहातर) हजार चार ४०० (चार सौ) आड २८ (अठाइस) आड ५७ (सतावन) लाख, १४ (चवदह) हजार २८० (दो सौ अस्सी) स्त्री भोगवे। ता पण त्रिप्त न हुवा। ता। रे जीव ? ए मिनष ना औदारिक शरीर सम्बन्धि महा सुगता अल्पकाल ना सुख थी सू । त्रिपत हुसा। इम जाणि न रुच उतारवा।

रे जाव ? आरज क्षत्र। उत्तम कुल। दीघ आउखा। पूरी इन्द्री। सतगुरानी सगत। वीतराग ना वचना ना साभलवा। वीतराग ना वचन कहवा छ ? सत्य छ, उत्तम निमल निर्दोष। सकल काय नी सिद्धि ना करण हार। जन्म मरण ना मिटावन हार एकात हितकारी।

रे जीव ! ज्या लग जरा नहा रोग नहीं तथु द्री ना बल हाण न पड त्या लग धम ना अवसर जाणि। सयम तप ने विष प्राक्रम फोडवा। ज्यू परम सुख—महासुख पामिये।

इसो करणी कौण कीधी ?

श्री धन्ना काकन्दी सामी। बत्तीस स्त्रिया छाडि दीक्षा लइ न मसीनाम। बेले बले पारणा। पारणपारण आयंबिल रूखे आहार। ... हूत दिया। घणी उत्कष्ट करणी ...

नव मास म । तीन क्राड पाच लाग । इकसठ हजार ।, तीन सौ साम उमास नद स्वाथ सिद्ध पहुँचा । ततीस मागर ने आउप । एव साम उसास उपर सुख —दोयसक्राड पल । सात क्रोड पल । सत्ताणव लाख पल । छिनव हजार पल । नौ सौ पल । अठानव पल, एक पल ना छटा भाग माठरा । एतला सुख पुद्‌गलीक । एक एक सासोसास उपर भोगवे । पीछे मिनष थई, मोक्षजासी त मा ाना आत्मिक सुख सदा इव धारा छै ।
एहवा अनन्त आत्मिक सुख साधुपणा थी पामिय ।

नित्य चितारने के १४ नियम

(१) सचित—माटी, पाणी, अग्नि वनस्पति फल, फूल छाल काष्ठ, मूल, पत्र बीज त्वचा तथा अग्नि प्रमुख अनेक शस्त्र लाग्यु न होय त इलायची, लोंग बादाम इत्यादिक सचित नु वजन धारवु ।

(२) द्रव्य—धातु वस्तुनी शली तथा अपनी आँगुली के सिवाय जा वस्तु मुख म दीज सा सव द्रव्य की गिणती मे आव । नामान्तर स्वादान्तर स्वरूपान्तर परिणामान्तर द्रव्यान्तर होण स द्रव्यान्तर होव । जसे गहूँ एक द्रव्य किन्तु उसकी रोटी फीणा राटी बाटा और बाटा यह सब द्रव्य जुदा कहिये । इसी प्रकार भात दाल राटा माडिया, पलव, तरकारी पापड सोचिया, लड्डू फीणी, घेवर खाजा इत्यादि । यहा उत्कृष्ट द्रव्य का नाम लेई राख तो, एक ही द्रव्य कहिये । जस मेव की खीचड़ी अनेक द्रव्य निष्पन्न है किन्तु नाम लेवे रखने से एक ही द्रव्य है ।

परनारा त्याग श्री स्वदारा से ही सन्तोष राग, उसका भी प्रमाण कर, अन्तराय दणी रहा, समाग मेलगो नही।

(१२) दिसि—पूर्व, पश्चिम उत्तर, दक्षिण, नीचू अने ऊंच ए छ दिशाए जावा आवाना कोसनु प्रमाण धारवु। चिट्ठी, तार आदमी माल, इतने कोस भेजना तथा मगाना।

(१३) न्हाण—सब अग न्हावु तहनी गणती तथा पाणीना वजन धारवु।

(१४) भत्तसु—भाजन तथा पाणी वापरवु तेहना वजननु प्रमाण करवु। इतना पर उपरान्त जीमणा तथा पाणी पीवणो नहीं।

सम्यक्त्व के पाच लक्षण

(१) शम—क्रोध मान माया और लोभ का उपशमन।
(२) सवेग—मोक्ष की अभिलाषा।
(३) निर्वेद—ससार से उदासीनता।
(४) अनुकम्पा—जीवो के प्रति दया।
(५) आस्तिक्य—वीतराग के प्रवचन म श्रद्धा।

सम्यक्त्व के पाच दूषण

(१) शका—वीतराग के वचनो म सशय।
(२) काक्षा—अन्य मत ग्रहण करने की इच्छा।
(३) विचिकित्सा—धर्म के फल (परिणाम) मे सन्देह।
(४) पर पाषण्ड प्रशसा—अन्य दर्शन की प्रशसा।
(५) पर पाषण्ड सस्तव—अन्य दार्शनिको से परिचय (राग भाव)।

सम्यक्त्व के छह स्थान

(१) जीव का अस्तित्व है।
(२) जीव का नित्यत्व है।
(३) जीव का कर्तृत्व है।
(४) जीव का भोक्तृत्व है।
(५) जीव का मुक्तत्व है।
(६) मुक्ति के उपाय साधन है।

छह आगारों के नाम

(१) राजाभियोग—राजा के कहने से।
(२) गणाभियोग—समाज के कहने से।
(३) बलाभियोग—अन्य अथवा चोर के बल से।
(४) सुराभियोग—देवता के कहने से।
(५) कान्ताराभियोग—अटवी उल्लंघन करते समय।
(६) गुरु निग्रहाभियोग—माता पिता आदि गुरु जनों के कहने से।

जैनागमों के सूक्त

(धम)

धम्मा मगल मुक्किठठ अहिसा मजमो तवो ।
देवावि त नमसति जस्स धम्मे सयामणा (दश० १ १)

धम उत्कृष्ट मगल है। अहिंसा सयम और तप धम है। जिसका मन सदा धम म है उसे देवता भी नमते हैं ॥१॥

अहिंस सच्च च अतेणग च, तत्तो य बभ अपरिग्गह च।
पडिवज्जिया पच महव्वयाइ, चरिज्ज धम्म जिणदेसिय विउ ॥
(उत्त० २१-१२)

अहिंसा, सत्य अस्तेय, ब्रह्मचय और अपरिग्रह—इन पाच महाव्रतो को स्वीकार करके बुद्धिमान मनुष्य जिनेश्वर भगवान द्वारा उपदिष्ट धम का आचरण करे।

(अहिंसा)

तत्थिम पढम ठाण, महावीरेण देसिय।
अहिंसा निउणा दिठठा सव्व भूएसु सजमो (दश० ६ ६)

भगवान महावीर ने अठारह धम स्थाना म सब से पहला स्थान अहिंसा का बतलाया है। सब जीवा के साथ सयम से व्यवहार रखना सच्ची अहिंसा है।

सव्वे जीवा वि इच्छति, जीविउ न मरिज्जिउ।
तम्हा पाणवह घोर निग्गथा वज्जयति ण (दश० ६ १०)

सभी जीव जीना चाहते हैं, मरना कोई नहीं चाहता। इसलिये निर्ग्रन्थ प्राणिवध रूपी घोर पाप का सर्वथा परित्याग करते हैं।

समया सव्वभूएसु सत्तु मित्तेसु वा जगे।
पाणाइवाय विरई जावज्जीवाए दुक्करं॥ (उत्त० १६ २५)

संसार में सब प्राणियों के प्रति—चाहे वे शत्रु हों या मित्र हों—सम भाव रखना तथा जीवन पर्यन्त हिंसा का सर्वथा त्याग करना दुष्कर है।

(सत्य)

निच्चकालप्पमत्तेणं मुसावाय विवज्जणं।
भासियव्वं हियं सच्चं निच्चाउत्तेण दुक्करं॥ (उत्त० १६-२६)

सदा अप्रमादी और सावधान रहकर, असत्य का त्याग कर हितकारी सत्य वचन ही बोलना चाहिये। इस तरह सत्य बोलना बड़ा कठिन है।

(अस्तेय)

चित्तमंतमचित्तं वा अप्पं वा जइ वा बहुं।
दन्त सोहण मित्तंपि उग्गहं से अजाइया॥ (दश० ६ १४)

पदार्थ सचित्त हो या अचित्त अल्प हो या अधिक दांत कुरेदने की सीक तक भी संयमी पुरुष अधिकारी की आज्ञा बिना नहीं लेता।

(ब्रह्मचर्य)

कामाणुगिद्धि प्पभवं खु दुक्खं सव्वस्स लोगस्स सदेवगस्स।
जं काइयं माणसियं च किंचि तस्संतगं गच्छइ वीयरागो॥

(उत्त० ३२ १९)

...समस्त संसार के शारीरिक तथा मानसिक सभी प्रकार के दुःखों का मूल काम-भोगों की वासना ही है। जो इस सम्बन्ध में वीतराग हो जाता है वह सभी प्रकार के दुःखों से छूट जाता है।

जहाय किंपागफला मनोरमा रसेण वण्णेण य भुज्जमाणे।
ते खुड्डए जीविए पच्चमाणा एओवमा कामगुणा विवागे॥

जैसे रस और रूप रंग की दृष्टि से मनोरम दीखने वाले किंपाक फल खाने में मधुर लगते हैं लेकिन खा लेने पर वे जीवन-नाश करने वाले हैं। वैसे ही ये काम भोग भोग काल में बड़े मधुर लगते हैं लेकिन उनका विपाक (फल परिणति) होने पर वे सर्वनाशकारी सिद्ध होते हैं।

(अपरिग्रह)

न सो परिग्गहो वुत्तो, नायपुत्तेण ताइणा।
मुच्छा परिग्गहो वुत्तो इइ वुत्तं महेसिणा॥ (दश० ६-२०)

प्राणिमात्र के संरक्षक भगवान महावीर ने संयम साधना के लिये आवश्यक वस्त्र पात्र आदि स्थूल पदार्थों को परिग्रह नहीं बतलाया है किन्तु इनमें मूर्च्छा (आसक्ति) रखना ही परिग्रह है।

(विनय)

मूलाओ खंधप्पभवो दुमस्स, खंधाओ पच्छा समुवेंति साहा।
साहाप्पसाहा विरुहंति पत्ता, तओ से पुप्फं च फलं रसो य॥
(दश० ९-२ १)

वृक्ष के मूल से स्कन्ध, स्कन्ध से नाना नाना से प्रशाखा और उनसे पत्ते उत्पन्न होकर क्रमशः फूल, फल और रस उत्पन्न होते हैं।

एवं धम्मस्स विणओ, मूलं परमो से मोक्खो।
जेण कित्ति सुयं सिग्धं, निस्सेसं चाभिगच्छइ ॥(दश० ९-२ २)

इसी भांति धर्म का मूल विनय है और मोक्ष उसका अंतिम रस है। विनय से ही मनुष्य कीर्ति विद्या, श्लाघा और निःश्रेयस शीघ्र प्राप्त करता है।

(चार-अंग)

चत्तारि परमंगाणि दुल्लहाणीह जन्तुणो।
माणुसत्तं, सुई सद्धा संजममि य वीरियं ॥ (उत्त० ३ १)

संसार में जीवों को इन चार अंगों (जीवन विकास के साधनों) का प्राप्त होना वस्तुतः दुर्लभ है। वे चार अंग ये हैं—मनुष्यत्व, धर्म श्रुति, सत्श्रद्धा और संयम मार्ग में पुरुषार्थ।

(कषाय)

कोहो य माणो य अणिग्गहीया, माया य लोभो य पवड्ढमाणा।
चत्तारि एए कसिणा कसाया, सिंचन्ति मूलाइं पुणब्भवस्स ॥

अनिगृहीत क्रोध अहङ्कार बढ़ते हुए माया और लोभ, ये चारों ही कषाय पुनर्जन्म रूपी संसार वृक्ष के मूल को सींचते हैं।

कोहो पीइं पणासेइ, माणो विणयनासणो।
माया मित्ताणि नासेइ लोहो सव्व विणासणो (दश०-८)

क्रोध प्रीति का, अहङ्कार विनय का कपट मित्रता का और लाभ सार सदगुणा का नाश करता है।

उवसमण हण कोह माण मद्दवया जिण।
माय मज्जव भावेण लाह स तासस्रा जिण। (दश० ८)

उपशम (शान्ति) स क्रोध नम्रता स अहकार सरलता स कपट और सन्तोष स लोभ का जीत।

जहा लाहा तहा लाहा, लाहा लाहो पवड्डई।
दो माम कय कज्ज कोडीए वि न निठ्ठिय ॥ (उत्त० ८ १६)

ज्यो ज्यो लाभ बढ़ता है त्यो त्यो लाभ भी बढ़ता जाता है। देखा कपिल ब्राह्मण का पहल दो मासा साने की आवश्यकता थी वह बाद म क्रोडा से भी पूरी नही हुई।

सुवण्ण रुप्पस्स उ पव्वया भव सिया हु कलाससमा असखया।
नरस्स लुद्धस्स न त हि किचि इच्छा हु आगास समा अणतया ॥

कलास के समान विशाल सोन और चांदी के असख्य पवत भी यदि पास म हो जाय तो भी लाभी मनुष्य की तृप्ति के लिये व कुछ भी नही है। क्याकि तृष्णा आकाश के समान अनन्त है।

(प्रमाद)

जहा य अण्डप्पभवा बलागा, अण्ड बलागप्पभव जहा य।
एमेव मोहाययण खु तण्हा मोह च तण्हाययण वयति ॥

जैसे मुर्गी अण्ड से और अण्डा मुर्गी स उत्पन्न होता है। उसी प्रकार तृष्णा से मोह मोह स तृष्णा उत्पन्न होती है।

रागो य दोसो वि य कम्म बीयं कम्मं च मोहप्पभवं वयंति ।
कम्मं च जाई मरणस्स मूलं दुक्खं च जाई मरणं वयंति ॥

राग और द्वेष दोनों कर्म के बीज हैं और कर्म मोह से उत्पन्न होते हैं। कर्म जन्म और मृत्यु का मूल है। जन्म और मरण ही दुःख है।

दुक्खं हयं जस्स न होइ मोहो मोहो हओ जस्स न होइ तण्हा ।
तण्हा हया जस्स न होइ लोहो लोहो हओ जस्स न किंचणाइं ॥

जिसको मोह नहीं है उसने दुःख का नाश कर दिया। जिसको तृष्णा नहीं है उसने मोह का नाश कर दिया। जिसने लोभ का परित्याग कर दिया उसने तृष्णा का क्षय कर डाला और जो अकिञ्चन है उसने लोभ का विनाश कर दिया।

(अप्रमाद सूत्र)

दुमपत्तए पण्डुयए जहा निवडइ राइगणाण अच्चए ।
एवं मणुयाण जीवियं समयं गोयम ! मा पमायए ॥ (उत्त० १०-१)

जैसे वृक्ष का पत्ता पीला होकर गिर जाता है वैसे ही मनुष्य का जीवन भी पुण्य समाप्त होने पर नष्ट हो जाता है। अतः हे गौतम ! क्षण मात्र भी प्रमाद का सेवन मत कर।

वोच्छिंद सिणेहमप्पणो कुमुयं सारइयं व पाणियं ।
से सव्व सिणेह वज्जिए समयं गोयम ! मा पमायए ॥ (उत्त० १०)

जैसे शरद ऋतु का कमल पानी से अलिप्त रहता है वैसे सारे राग द्वेष को त्याग कर के तू निरासक्त बन। हे गौतम ! क्षण मात्र भी प्रमाद का सेवन मत कर।

छन्द निरोहेण उवेइ मोक्खं, आसे जहा सिक्खिय वम्मधारी ।
पुव्वाइं वासाइं चरऽप्पमत्तो, तम्हा मुणी खिप्पं मुवेइ मोक्खं ॥

जिस प्रकार सधा हुआ कवचधारी अश्व स्वच्छन्दता रोकने से विजयी होता है। उसी तरह साधक मनुष्य भी जीवन संग्राम में विजयी होकर मोक्ष प्राप्त करता है। जो मुनि अप्रमत्त रूप से दीर्घकाल तक संयम धर्म का आचरण करता है। वह शीघ्र ही मोक्ष को पाता है।

मन्दा य फासा बहु लोहणिज्जा, तहप्पगारेसु मणं न कुज्जा ।
रक्खिज्ज कोहं विणएज्ज माणं मायं न सेवे पयहिज्ज लोहं ॥

संयम जीवन में मन्दता लाने वाले ये बन्धन बहुत ही लुभावने मालूम होते हैं। संयमी पुरुष उनकी ओर अपने मन को कभी भी आकृष्ट न होने दे। साधक का कर्तव्य है कि क्रोध को वश करे, अहङ्कार को दूर करे, माया का सेवन न करे और लोभ को छोड़ दे।

जहा कुम्मे सअङ्गाइं सए देहे समाहरे ।
एवं पावाइं मेहावी अज्झप्पेण समाहरे ॥

जैसे कछुआ (बचाव के समय) अपने अङ्गों को अपने शरीर में समेट लेता है उसी तरह मेधावी अपनी इन्द्रियों को (विषयों की ओर जाती हुई को) आध्यात्मिक ज्ञान से रोक ले।

जो सहस्सं सहस्साणं, मासे मासे गवं दिए ।
तस्स वि संजमो सेयो, अदितस्स वि किंचण ॥

जो मनुष्य प्रति मास लाखों गाय दान देता है उसकी

अपना कुछ भी दान न करने वाला, लेकिन संयम का आच-
रण करने वाला श्रेष्ठ है।

तस्सेस मग्गो गुरु-वुड्ढ सेवा विवज्जणा बाल जणस्स दूरा।
सज्झाय एगन्त निसेवणा य, सुत्तत्थ संचिन्तणया धिई य॥

उस मोक्ष प्राप्ति का मार्ग यह है—सद्गुरु तथा अनुभवी
वृद्धों की सेवा अज्ञानी असंयमी पुरुषों की संगति से दूर
रहना, सत् शास्त्रों का स्वाध्याय करना, एकान्त निवास करना
तथा सूत्रों के मूल और अर्थ का चिंतन मनन करना एवं धै-
र्य प्राप्त करना।

(सम्यक्त्व सूत्र)

तहियाण तु भावाण सब्भावे उवएसणं।
भावेण सद्दहंतस्स सम्मत्तं तं वियाहियं।

सद्गुरु के उपदेश से अथवा अपने आप ही स्वभाव से
तत्त्वों के अस्तित्व में श्रद्धा होने को सम्यक्त्व कहते हैं।

(मुक्ति मार्ग)

नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एयं मग्गं मणुपत्ता, जीवा गच्छंति सुग्गइं ॥

ज्ञान दर्शन चारित्र और तप रूपी मार्ग को प्राप्त कर जीव सद्‌गति को प्राप्त होते हैं।

(आत्म तत्व)

अप्पा नई वेयरणी, अप्पा मे कूडसामली।
अप्पा कामदुहा धेणू, अप्पा मे नंदणं वणं ॥

आत्मा ही नरक की वैतरणी नदी और कूट शाल्मली वृक्ष है। आत्मा ही स्वर्ग की कामधेनु गौ तथा नन्दन वन है।

अप्पा कत्ता विकत्ता य दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ ॥ (उत्त० २१)

आत्मा ही अपने सुख और दुःखों की कर्ता तथा नाश करने वाली है। सन्मार्ग गामी आत्मा मित्र और कुमार्गगामी आत्मा शत्रु रूप है।

जो सहस्सं सहस्साणं संगामे दुज्जए जिणे।
एगं जिणेज्ज अप्पाणं एस से परमो जओ ॥

जो दुर्जय संग्राम में लाखों योद्धाओं को जीतता है यदि वह अपनी आत्मा को जीत ले तो वह उसकी सब श्रेष्ठ विजय होगी।

एग जिये जिया पच, पच जिये जिया दस ।
दसहा उ जिणित्ताण, सव्वसत्तू जिणामह ॥

एक आत्मा को जीतने से पाच इन्द्रियो पर विजय होती है। पाच इन्द्रियो को जीतने से दस (आत्मा, पाच इन्द्रिय और चार कषाय) पर विजय होती है। दस को जीतने से मैं सब शत्रुओ को जीत लेता हूँ।

जस्सेव अप्पा हु हवज्ज निच्छिओ, चइज्ज देह न हु धम्म सासण।
तं तारिसं नो पइलेंति इंदिया उवितवाया व सुदसण गिरि ॥

जिस साधक की आत्मा इस प्रकार दृढ निश्चयी हो कि मैं शरीर को भले छोड दूगा परन्तु अपना धर्म शासन नही छोड सकता उसे इन्द्रियाँ कभी विचलित नही कर सकती। जैसे हवा का भीषण बवण्डर सुमेरु को।

पूज्य और भिक्षु

अलोल भिक्खू न रसेसु गिद्धे उछ चरे जीविय नाभिकखे।
इड्ढि च सक्कारण पूयण च चए ठियप्पा अणिहे जे स भिक्खू ॥

जो मुनि अलोलुप है जो रसो मे अगृद्ध है जो उञ्छ वृत्ति से भिक्षा करता है जिसे जीने का मोह नही है जो ऋद्धि सत्कार और पूजा प्रतिष्ठा का मोह छोड देता है जो स्थितात्मा तथा निस्पृही है वही भिक्षु है।

त देहवास असुइ असासय, सया चये निच्च हियठियप्पा।
छिंदित्तु जाइ मरणस्स बधण, उवेइ भिक्खू अपुणागम गइ ॥

जो भिक्षु इस देहवास को अशुचि और अशाश्वत समझ कर नित अपनी आत्मा का हित करने में स्थिर रहता है, वह जन्म मरण के बन्धनों को सर्वथा काट कर अपुनरागमन गति (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

मोक्ष-मार्ग

कहं चरे कहं चिट्ठे, कहमासे कहं सए।
कहं भुंजंतो भासंतो, पावं कम्मं न बंधइ ॥ (दश० ४ ७)

कैसे चले ? कैसे खड़ा हो ?, कैसे बैठे, कैसे सोये ?, कैसे भोजन करे ?, कैसे बोले ? जिससे कि पाप कर्म का बंध न हो।

जयं चरे जयं चिट्ठे जयमासे जयं सए।
जयं भुंजंतो भासंतो, पावकम्मं न बंधइ। (दश० ४ ८)

विवेक (जयणा) से चले, विवेक से खड़ा हो विवेक से बैठे, विवेक से सोये, विवेक से भोजन करे और विवेक से ही बोले तो पाप कर्म का बंध नहीं होता।

सव्वभूयप्पभूयस्स, सम्मं भूयाइं पासओ।
पिहियासवस्स दन्तस्स पावं कम्मं न बंधई ॥ (दश०४ ६)

जो सब जीवों को अपने समान समझता है अपने पराये को समान भाव से देखता है जिसने सारे आश्रवों का निरोध कर लिया है। जो चञ्चल इन्द्रियों का दमन कर चुका है उसे पाप कर्म का बंधन नहीं होता।

तवागुणपहाणस्स, उज्जुमइ खंति संजम रयस्स।
परीसहे जिणतस्स, सुलहा सुग्गइ तारिसगस्स॥

जिसमे तपस्या का गुण प्रधान है जो प्रकृति से सरल है, क्षमा और संयम में रत है, परिषहों को जीतनेवाला है, उसे सद्गति मिलनी सुलभ है।

समत खामणा सूत्र

खामेमि सव्व जीवा सव्व जीवा खमन्तु मे।
मित्ती मे सव्वभूएसु वेरं मज्झ न केणइ॥

मैं समस्त जीवों से क्षमा मांगता हूँ। सब जीव मुझे क्षमा करें। सब जीवों के साथ मेरी मैत्री है किसी के भी साथ मेरा वैर नहीं है।

जं जं मणेण बद्ध जं जं वायाए भासियं पावं।
जं जं कायेण कम्मं, मिच्छामि दुक्कडं तस्स॥

मैंने जो जो पाप मन से किये हैं वाणी द्वारा किये हैं और शरीर से किये हैं—वे मेरे सारे पाप मिथ्या हो जाए।

(नीति सूत्र)

भक्तामर

(आदिनाथ-स्तोत्र)

भक्तामर प्रणत मौलिमणिप्रभाणा
मुद्योतक दलितपापतमोवितानम ।
सम्यक प्रणम्य जिन पादयुग युग।
वालम्बन भवजले पतता जनानाम् ॥१॥

य संस्तुत सकलवाङ्मयतत्वबोधा
दुद्भूत बुद्धिपटुभि सुरलोकनाथ ।
स्तोत्रैजगतत्रितयचित्तहरैरुदारै
स्तोष्ये किलाहमपित प्रथम जिनेन्द्रम ॥२॥

बुद्धया विनाऽपि विबुधार्चितपादपीठ
स्तोतु समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् ।
बाल विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब
म य क इच्छति जन सहसा ग्रहीतुम् ॥३॥

वक्तु गुणान गुणसमुद्र ! शशाङ्ककान्तान्
कस्ते क्षम सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्धया ।
कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्र
को वा तरीतुमलमम्बुनिधि भुजाभ्याम ॥४॥

सोह तथापि तव भक्ति वशान्मुनीश
कर्तु स्तव विगतशक्तिरपि प्रवृत्त
प्रीत्यात्मवीर्य मविचार्य मृगो मृगेन्द्र
नाभ्येति कि निजशिशो परिपालनार्थम ॥५॥

अल्पश्रुत श्रुतवता परिहासधाम
त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम ।
यत्कोकिल किल मधौ मधुर विरौति
तच्चाम्चूतकलिकानिकरैकहेतु ॥६॥

त्वत्संस्तवेन भवसंततिसंनिबद्ध
पाप क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम ।
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम ॥७॥

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवन मयेद-
मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात ।
चेतो हरिष्यति सता नलिनीदलेषु
मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिन्दु ॥८॥

आस्ता तव स्तवनमस्तसमस्तदोष
त्वत्सकथापि जगता दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरण कुरुते प्रभैव
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ॥९॥

नात्यद्भुत भुवनभूषण भूतनाथ
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्त ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किंवा
भूत्याश्रित य इह नात्मसम करोति ॥१०॥

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीय
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षु ।
पीत्वा पय शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धो
क्षार जल जलनिधेरसितु क इच्छेत ॥११॥

य शान्तरागरुचिभि परमाणुभिस्त्वं
निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत ।
तावन्त एव खलु तऽप्यणव पृथिव्या
यत्ते समानमपर नहि रूपमस्ति ॥१२॥

वक्त्र क्व त सुरनरारगनेत्रहारि,
नि शेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम ।
बिम्ब कलङ्कमलिन क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम ॥१३॥

सम्पूर्णमण्डल शशाङ्क कला कलाप
शुभ्रा गुणास्त्रिभुवन तव लङ्घयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वर नाथ मेक
कस्तान्निवारयति सञ्चरतो यथेष्टम् ॥१४॥

चित्र किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्गनाभि
र्नीत मनागपि मनो न विकारमार्गम ।
कल्पान्तकाल मरुता चलिता चलेन,
किं मन्दराद्रि शिखर चलित कदाचित ॥१५॥

निर्धूमवर्ति रपवर्जित तैलपूर
कृत्स्न जगत्त्रयमिद प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुता चलिताचलाना,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ [1] जगत्प्रकाश ॥१६॥

नास्त कदाचिदुपयासि न राहुगम्य
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरो दर निरुद्ध महाप्रभाव
सूर्यातिशायि महिमासि मुनीन्द्र लोके ॥१७॥

नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं
गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति
विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ॥१८॥

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा
युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमस्सु नाथ ।
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके
कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ॥१९॥

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं
नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं
नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ॥२०॥

मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः
कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ॥२१॥

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ॥२२॥

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं
नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र पन्थाः

त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं
ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं
ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ॥२४॥

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात्
त्वं शङ्करोऽसि भुवनत्रयशङ्करत्वात् ।
धातासि धीर शिवमार्गविधेर्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि ॥२५॥

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्तिहराय नाथ
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय
तुभ्यं नमो जिन भवोदधिशोषणाय ॥२६॥

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणैरशेष-
स्त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश ।
दोषैरुपात्तविविधाश्रयजातगर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ॥२७॥

उच्चैरशोकतरुसंश्रितमुन्मयूख,
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत्किरणमस्ततमोवितानं,
बिम्बं रवेरिव पयोधरपार्श्ववर्ति ॥२८॥

सिंहासने मणिमयूखशिखाविचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्विलसदंशुलतावितानं
तुङ्गोदयाद्रिशिरसीव सहस्ररश्मेः ॥२९॥

कुन्दावदातचलचामरचारुशोभं
विभ्राजते तव वपुः कलधौतकान्तम् ।
उद्यच्छशाङ्कशुचिनिर्झरवारिधार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम् ॥३०॥

छत्रत्रयं तव विभाति शशाङ्ककान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगितभानुकरप्रतापम् ।
मुक्ताफलप्रकरजालविवृद्धशोभं
प्रख्यापयत्त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ॥३१॥

गम्भीरताररवपूरितदिग्विभाग-
स्त्रैलोक्यलोकशुभसंगमभूतिदक्षः ।
सद्धर्मराजजयघोषणघोषकः सन्
खे दुन्दुभिर्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ॥३२॥

मन्दारसुन्दरनमेरुसुपारिजात-
सन्तानकादिकुसुमोत्करवृष्टिरुद्धा ।
गन्धोदबिन्दुशुभमन्दमरुत्प्रपाता
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा ॥३३॥

शुम्भत्प्रभावलयभूरिविभा विभोस्ते
लोकत्रयद्युतिमतां द्युतिमाक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्दिवाकरनिरन्तरभूरिसंख्या
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि सोमसौम्याम् ॥३४॥

स्वर्गापवर्गगममार्गविमार्गणेष्टः
सद्धर्मतत्त्वकथनैकपटुस्त्रिलोक्याः ।
दिव्यध्वनिर्भवति ते विशदार्थसर्व-
भाषास्वभावपरिणामगुणैः प्रयोज्यः ॥३५॥

उन्निद्रहेमनवपङ्कजपुञ्जकान्ती
पर्युल्लसन्नखमयूखशिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र धत्तः
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ॥३६॥

इत्थं यथा तव विभूतिरभूज्जिनेन्द्र !
धर्मोपदेशनविधौ न तथा परस्य ।
यादृक् प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् कुतो ग्रहगणस्य विकाशिनोऽपि ॥३७॥

श्च्योतन्मदाविलविलोलकपोलमूल,
मत्तभ्रमद्भ्रमरनादविवृद्धकोपम् ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तं
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ॥३८॥

भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्त
मुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः ।
बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि
नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ॥३९॥

कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं
दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं
त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ॥४०॥

रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं
क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्क
स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ॥४१॥

मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि
संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ॥४७॥

स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धा,
भक्त्या मया रुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं,
तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मी ॥४८॥

श्री शान्त सुधारस-गेय-काव्य

अनित्य भावनात्मिका प्रथमा गीति

तर्ज—वहम्मा

मूढ ! मुह्यसि मुधा मूढ ! मुह्यसि मुधा
विभव मनुचिन्त्य हृदि सपरिवारम् ।
कुश गिरसि नीरमिव गलदनिलकम्पित,
विनय जानीहि जीवितमसारम् ॥मूढ०॥ ध्रुव ॥

पश्य भंगुरमिदं विषयसुखसौहृद
पश्यतामेव नश्यति सहासं ।
एतदनुहरति संसार रूप रया
उज्वलज्जलदबालिका रुचिविलासं ॥१॥

हन्त ! हतं ! यौवन पुच्छमिव श्वान
कुटिलमिह तदपि लघुदृष्ट नष्टं ।
तेन बत परवशा परवशा हतधियः
कटुकमिह किं न कलयन्ति कष्टं ॥२॥

यदपि पिण्याकतामङ्गमिदमुपगतं,
भुवन-दुर्जय जरापीत सारं ।
तदपि गतलज्जमुज्झति मनो नाङ्गिनां
वितथमति कुथित मन्मथ विकारं ॥३॥

सुखमनुत्तर सुरावधि यदतिमेदुरं
कालतस्तदपि कलयति विरामं ।

वतरदितग्त्तदा वस्तु मामारिव ,
स्थिरतर भवनि चिन्तय निकामम् ॥४॥
य सम क्रीडिता ये च भृशमाडिता,
य सहाबृध्महि प्रीतिविवादम ।
तान जनान वीक्ष्य वत भस्मभूय गतान्,
निर्विशङ्कास्म इति धिक् प्रमादम् ॥५॥
असकृदुन्मिष्य निमिषन्ति सिन्धूर्मिवत्,
चेतना चेतना सव भावा ।
इन्द्रजालोपमा स्वजनधनसगमा-
स्तेषु रज्यन्ति मूढ स्वभावा ॥६॥
कवलयन्नविरत जगमाजगमम्,
जगदहो नव तृप्यति कृतान्त ।
मुखगतान् खादत स्तस्य करतलगतै
न कथ मुपतप्स्यतेऽस्माभि रत ॥७॥
नित्य मेक चिदानन्दमय मात्मनो, रूप मभिरूप्य सुखमनुभवेयम् ।
प्रशम रस नव सुधा पान विनयोत्सवो भवतु सतत सतामिह भवेयम ॥८॥

एकत्व-भावना

परजिया रागेण गीयते

विनय विनय वस्तुतत्त्व, जगति निजमिह कस्य किम ।
भवति मतिरिति यस्य हृदये, दुरित मुदयति तस्य किम् ॥ १ ॥
एक उत्पद्यते तनुमा—नेक एव विपद्यते ।
एक एव हि कर्म चिनुते सवक फलमश्नुते ॥ २ ॥

पश्यसि किं न मन परिणम, निज निज गत्यनुसार रे।
येन जनेन यथा भवितव्यं तदभवता दुर्वार रे॥ अ० ॥५॥
रमय हृदा हृदयंगमसमता, संवृणु माया जाल रे।
वथा वहसि पुद्गल परवशता मायु परिमित काल रे॥ अ० ॥६॥
अनुपम तीर्थ मिदं स्मर चेतन मन्त स्थितमभिराम रे।
चिरंजीव विशदपरिणाम लभसे सुखमभिराम रे॥ अ० ॥७॥
परब्रह्म परिणाम निदान स्फुट—केवल—विज्ञान रे।
विरचय विनय विरचित शान्त शान्त सुधारस पान रे॥ अ० ॥८॥

स्थित-प्रज्ञ-लक्षण

अर्जुन-उवाच

स्थित प्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव।
स्थितधी किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम ॥५४॥

श्री भगवानुवाच

प्रजहाति यदा कामान सर्वान् पार्थ मनोगतान।
आत्मन्येवात्मना तुष्ट स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥५५॥
दु खेष्वनुद्विग्नमना सुखेषु विगतस्पृह।
वीत राग भय क्रोध स्थितधी मुनि रुच्यते ॥५६॥
य सर्वत्रानभिस्नेह-स्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम।
नाभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥५७॥
यदा संहरते चाय कूर्मोऽङ्गानीव सर्वश।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्य-स्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥५८॥

विषया विनिवर्तन्ते, निराहारस्य देहि
रसवर्ज रसोप्यस्य, परं दृष्ट्वा निवर्तते ॥५९॥
यततो ह्यपि कौन्तेय ! पुरुषस्य विपश्चितः ।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥६०॥
तानि सर्वाणि, संयम्य युक्त आसीत मत्परः ।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥६१॥
ध्यायतो विषयान् पुंसः सङ्गस्तेषूपजायते ।
सङ्गात् संजायते कामः कामात् क्रोधोभिजायते ॥६२॥
क्रोधाद् भवति संमोहः संमोहात् स्मृति विभ्रमः ।
स्मृति भ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात् प्रणश्यति ॥६३॥
राग द्वेष वियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन् ।
आत्मवश्यै विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥६४॥
प्रसादे सर्व दुःखानां हानि रस्योपजायते ।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥६५॥
नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना ।
न चा भावयतः शान्ति रशान्तस्य कुतः सुखम् ॥६६॥
इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोनुविधीयते ।
तदस्य हरति प्रज्ञां, वायु नवि मिवाम्भसि ॥६७॥
तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः ।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्य—तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥६८॥
या निशा सर्वभूतानां, तस्यां जागर्ति संयमी ।
यस्यां जाग्रति भूतानि, सा निशा पश्यतो मुने ॥६९॥
आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं, समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत् ।
तद्वद् [illegible] प्रविशन्ति सर्वे, स शान्ति माप्नोति न
कामकामी ॥७०॥

विहाय कामान् य सर्वान् पुमांश्चरति नि स्पृह ।
निर्ममो निरहङ्कार स शान्ति मधिगच्छति ॥७१॥
एपा ब्राह्मी स्थिति पार्थ ! नैना प्राप्य विमुह्यति ।
स्थित्वास्या मन्तकालेपि ब्रह्म निर्वाण मृच्छति ॥७२॥
गीता—अ० २

सम्बोधि-चतुर्दश अध्याय

—मेघ प्राह—

गह प्रवर्तने लग्नो गहस्थो भोगमाश्रित ।
साध्यस्य साधना कर्तु भगवन् कथमर्हति ॥१॥

—भगवान् प्राह—

दवानुप्रिय ! यस्य स्यादाशामक्ति क्षीणतागता ।
साध्यस्याराधना कुर्यात् स गृहे स्थिति माचरन् ॥२॥
गहे स्याग्धना नास्ति गहत्यागेपि नास्ति सा ।
आशा येन परित्यक्ता, साधना तस्य जायते ॥३॥
नाशा त्यक्ता गृह त्यक्त, नासौ त्यागी न वा गही ।
आशा येन परित्यक्ता, त्याग सोऽर्हति मानव ॥४॥
पदार्थ-त्याग मात्रेण त्यागी स्याद् व्यवहारत ।
आशाया परिहारेण, त्यागी भवति वस्तुत ॥५॥
पूर्णस्त्याग पदार्थाना, कर्तुं शक्या न देहिभि ।
आशाया परिहारस्तु कर्तु शक्योस्ति तरपि ॥६॥
यावानाशा-परित्याग, क्रियते गेह वासिभि ।
तावान् धर्मो मया प्रोक्त साऽगार धर्म उच्यते ॥७॥

विहाय कामान् य सर्वान्, पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
निर्ममो निरहङ्कारः स शान्तिमधिगच्छति ॥७१॥
एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ ! नैनां प्राप्य विमुह्यति ।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥७२॥
गीता—अ० २

सम्बोधि-चतुर्दश अध्याय

—मेघ प्राह—

गृहप्रवर्तने लग्नो गृहस्थो भोगमाश्रितः ।
साध्यस्य साधना कर्तुं भगवन् कथमर्हति ॥१॥

—भगवान् प्राह—

देवानुप्रिय ! यस्य स्यादासक्तिः क्षीणतां गता ।
साध्यस्याराधनां कुर्यात् स गृहे स्थितिमाचरन् ॥२॥
गृहे प्यारधना नास्ति, गृहत्यागेपि नास्ति सा ।
आशा येन परित्यक्ता साधना तस्य जायते ॥३॥
नाशा त्यक्ता गृहं त्यक्तं, नासौ त्यागी न वा गृही ।
आशा येन परित्यक्ता त्यागः सोऽर्हति मानवः ॥४॥
पदार्थ-त्याग मात्रेण त्यागी स्याद व्यवहारतः ।
आशाया परिहारेण त्यागी भवति वस्तुतः ॥५॥
पूर्णस्त्यागः पदार्थानां, कर्तुं शक्यो न देहिभिः ।
आशाया परिहारस्तु कर्तुं शक्योऽस्ति तैरपि ॥६॥
यावानाशा-परित्यागः, क्रियते गेहवासिभिः ।
तावान् धर्मो मया प्रोक्तः, सोऽगार-धर्म उच्यते ॥७॥

सम्यक् श्रद्धा भवत्यत्र, सम्यग् ज्ञान प्रजायते ।
सम्यक् चारित्र सम्प्राप्त योग्यता तत्र जायते ॥८॥
योग्यता मे॰ता मेधा, समस्यपरिहृता मया ।
एक एवान्यथा धर्म स्त्वम्पश न विद्यते ॥९॥

षोडश अध्याय

—मेघ प्राह—

मन प्रसाद महामि विमालम्बनमस्थित ।
कथ प्रमात्तो मुक्तिमाप्नामि ब्रूहि मे विभो ! ॥१॥

—भगवान् प्राह—

ज्ञानानन्द-सम्पूर्ण आत्मा भवति देहिनाम ।
तच्चिदात्त्मना मेघ ! तदध्यवसिना भव ॥२॥
तद् भावनाभावि त॰च तन्थ विहितापण ।
भुञ्जानोऽपि च कुर्वाणस्तिष्ठन् गच्छन्स्तथावदन ॥३॥
जीवश्च म्रियमाण्च युञ्जाना विषयिव्रजम् ।
तल्लेश्यो लप्स्यसे नून, मन प्रसादमुत्तमम ॥४॥
आत्मस्थित आत्महित, आत्मयोगी ततोभव ।
आत्मपराक्रमा नित्य ध्यान लीन स्थिराशय ॥५॥
समितो मनसा वाचा कायेन भव सन्ततम् ।
गुप्तश्च मनसा वाचा, कायेन सुसमाहित ॥६॥

अनुत्पन्नान् गुणान्, समहास्य पुनरागतान् ।
यथागुणाम नून, सम्यग मनस गुणाम् ॥७॥
क्रोधादीन मानमायान निगान यद्मामादन तथा ।
परिन्द्याप्सहिष्णुत्व सम्यग मनस स्थितिम् ॥८॥
पादयुग्मञ्च सङ्कल्प, प्रसारित भुजाश्रय ।
ईपनत स्थिर दृष्टिनम्यस मनसोपूर्णिम् ॥९॥
प्रयतं नाधिकृर्वाणाऽन्यांश्च विषयान् प्रति ।
तस्मान प्रीतविरज्यन्च मनस स्वास्थ्यमाप्स्यसि ॥१०॥
असमाञ्जस्यप्रयोग नति ध्यायन सन्तत ।
मनोन निग्रयाग च मनस स्वास्थ्यमाप्स्यसि ॥११॥
रोगस्य प्रतिकाराय नात ध्यायन्ताया त्यज ।
फलाना भागमवन्पान मनस स्वास्थ्यमाप्स्यसि ॥१२॥
शोक भय घृणां द्वेष विलाप क्रन्दन तथा ।
त्यजन्नाशाजान शोकान मनस स्वास्थ्यमाप्स्यसि ॥१३॥
न्यायाश नाम भोगाना, रक्षणायाचरेज्जन ।
हिंसा मृषा तथाऽदत्त, ता रौद्र न जायते ॥१४॥
तथा विधस्य जीवस्य, चित्तस्वास्थ्य पलायते ।
सरम्भ माहरय, मनस स्वास्थ्यमाप्स्यसि ॥१५॥
रागद्वेषौ लय यातो, यावतो यस्य देहिन ।
सुख मानसिक तस्य, तावदय प्रजायते ॥१६॥
वीतरागो भवेल्लोके, वीतराग मनुस्मरन् ।
उपासकदशा हित्वा, त्वमुपास्या भविष्यसि ॥१७॥
इन्द्रियाणि च सयम्य कृत्वा चित्तस्य निग्रहम् ।
सस्पर्शनात्मनात्मान परमात्मा भविष्यसि ॥१८॥

चन परापाय विचिन्तनेन कृत भविष्यामि कथ विभोऽहम् ॥१०॥
विडम्बित यत्स्मरघस्मरार्त्ति—दशावशात्स्व विषयान्धलेन ।
प्रकाशित तद्भवतो ह्रियैव सर्वज्ञ सर्वस्वयमेव वेत्सि ॥११॥
ध्वस्तोऽन्य मन्त्र परमेष्ठी मन्त्र, कुशास्त्रवाक्यैर्निहता गमोक्ति ।
कर्तु वृथा कर्म कुदेवसगा—दवाञ्छि ही नाथ ! मतिभ्रमो मे १२
विमुच्य दृग्लक्ष्यगत भवन्त ध्याता मया मूढधिया हृदन्त ।
कटाक्षवक्षोज गभीरनाभि —कटीतटीया सुदृशा विलासा ॥१३॥
लोलेक्षणावक्त्र निरीक्षण, यो मानस रागलवो विलग्न ।
न शुद्ध सिद्धान्त पयोधिमध्ये, धौतोऽप्यगात् तारक !
कारण किम् ? ॥१४॥
अग न चग न गणो गुणाना न निर्मल कोऽपि कला विलास ।
स्फुरत्प्रभा न प्रभुता च कापि तथाप्यहकार कदर्थितोऽहम् ॥१५॥
आयुर्गलत्याशु न पाप बुद्धि—र्गतवयो नो विषयाभिलाष ।
यत्नश्च भैषज्यविधौ न धर्मे स्वामिन् ! महामोह विडम्बना मे १६
नात्मा न पुण्य न भवो न पाप मया विटाना कटुगीरपीयम् ।
अधारि कर्णे त्वयि केवलार्के, परिस्फुटे सत्यपि देव ! धिङ् माम् १७
न देवपूजा न च पात्र पूजा, न श्राद्धधर्मश्च न साधु धर्म ।
लब्ध्वापि मानुष्यमिद समस्त, कृत मयाऽरण्य विलापतुल्यम् १८
चक्रे मयाऽसत्स्वपि कामधेनु, कल्पद्रु चिन्तामणिषुस्पृहार्त्ति ।
न जैन धर्मे स्फुटशर्मदेऽपि जिनेश ! मे पश्य विमूढ भावम् ॥१६॥
सद्भोगलीला न च रोग कीला, धनागमो नो निधनागमश्च ।
दारा न कारा नरकस्य चित्ते, व्यचिन्ति नित्य मयकाऽधमेन २०
स्थित न साधोर्हृदि साधुवृत्तात् परोपकारान्न यशोऽर्जित च ।
। न तीर्थोद्धरणादिकृत्य, मयामुधा हारितमेव जन्म ॥२१॥

वराग्य रगा न गुर्न्दितपु, न दुजनाना वचनपु नाति ।
नाध्यात्मनशा मम कापिन्व ! तार्यं कथकारभय भवाब्धि ॥२२॥
पूर्वभवञारि मया न पुण्य—मागामि जन्मन्यपि ना करिप्ये ।
यदीदशाऽह मम तन नष्टा भूताऽभवद भाविभवत्वयीश ! ॥२३॥
किंवा मुधाऽह वहुधागुधाभुव, पूज्य ! त्वदग्र चरित स्वकीयम् ।
जल्पामि यस्मात् त्रिजगत्स्वरूप निरुप कस्त्व कियदतन्त्र ? २४

दीनाद्धार धुरन्धर त्वदपरा नास्तेमदन्य कृपा—
पात्र नान्य जने जिनेश्वर ! तथाप्यता न याच श्रियम् ।
किन्त्वहन् निदमव कवलमहो सद्बोधिरत्न शिव
श्रीरत्नाकर ! मगलैक निलय ! श्रेयस्कर प्रार्थये ॥२५॥

"आदर्श बन के जाना"

दुनियाँ म आकर प्यार, गुणवान बन के जाना।
इन्सान बन क आया भगवान बन क जाना ॥ ध्रव।
महमान दो दिना का आया यहाँ तू बनकर।
सबका सदा भला कर उपकार करके जाना ॥१॥
मधप चाहे आये लालच भल दिखाये।
फिर भी सुमार्ग से तुम न कदम को हटाना ॥ ॥
सुख दुःख समान सहना जग से अलिप्त रहना।
अपने ही मन को अपने—निजरूप में रमाना ॥३॥
वाणी को सच्चा रखना जीवन को अच्छा रखना।
कहती है माहिनी' य, आदर्श बन के जाना ॥४॥

नेत्र पगपाय विवितनेन क्त भविष्यामि कथ विभो ऽहम् ॥१०॥

विडम्बित यस्मरघस्मरार्ति—दशावशात् स्व विषयान्धलेन ।
प्रकाशित तद्भवता ह्रियव सवा ! सवस्वयमेव वेत्सि ॥११॥

ध्वस्ताऽन्य म त्र परमेष्ठी मन्त्र, कुशास्त्रवाक्यै निहता गमोक्ति ।
कतु वथा कम कुदवसगा—दवाञ्छि ही नाथ ! मतिभ्रमो मे १२

विमुच्य दृगलक्ष्यगत भवन्त ध्याता मया मूढधिया हृदन्त ।
कटाक्षवक्षाज गभीरनाभि —कटीतटीया सुदृशा विलासा ॥१३॥

लालेक्षणावक्त्र निरीक्षण या मानस रागलवा विलग्न ।
न शुद्ध सिद्धान्त पयाधिमध्य, धाताऽप्यगात तारक !
कारण किम् ? ॥१४॥

अग न चग न गणो गुणाना न निमल कापिकला विलास ।
स्फुरत्प्रभा न प्रभुता च का पि, तथाप्यहकार कदर्थितोऽहम् ॥१५॥

आयुगलत्याशु न पाप बुद्धि—गतवयो नो विषयाभिलाष ।
यत्नश्च भषज्यविधौ न धर्मे, स्वामिन् ! महामोह विडम्बना मे १६

नात्मा न पुण्य न भवो न पाप, मया विटाना कटुगीरपीयम ।
अधारि कर्णे त्वयि केवलार्के, परिस्फुटे सत्यपि देव ! धिङ माम् १७

न देवपूजा न च पात्र पूजा, न श्राद्धधमश्च न साधु धम ।
लब्ध्वाऽपि मानुष्यमिद समस्त, कृत मयाऽरण्य विलापतुल्यम् १८

चक्रे मयाऽसत्स्वपि कामधेनु कल्पद्रु चिन्तामणिषुस्पृहार्ति ।
न जैन धर्मे स्फुटशमदेऽपि जिनेश ! मे पश्य विमूढ भावम् ॥१९॥

सद भोगलीला न च रोग कीला, धनागमो नो निधनागमश्च ।
दारा न कारा नरकस्य चित्ते, व्यचिन्ति नित्य मयकाऽधमेन २०

स्थित न साधो हृ दि साधुवृत्तात् परोपकारान्न यशोऽर्जित च ।
कृत न तीर्थोद्धरणादिकृत्य, मयामुधा हारितमेव जन्म ॥२१॥

वराग्य रगा न गुरुदितेषु, न दुजनानां वचनेषु नास्ति ।
नाव्या मनागा मम कापिदव ! ताय कथकारभय भवाब्धि ॥२०॥
पूवभवे कारि मया न पुण्य—मागामि जन्मन्यपि ना करिष्ये ।
यदीदृशाद् मम तेन नष्टा भूतादभवद् भाविभवत्रयीश ! ॥२३॥
किवा मुधाद् बहुधासुधाभुक्, पूज्य ! त्वदग्रे चरितं स्वकीयम् ।
जल्पामि यस्मात् त्रिजगत्स्वरूप, निरूपकस्त्वं कियदेतदत्र ॥२४॥

दीनोद्धारधुरन्धर स्वदपरो नास्तमदन्य कृपा—
पात्र नात्र जने जिनेश्वर ! तथाप्येता न याचे श्रियम् ।
किन्त्वहन्निदमेव केवलमहो सद्बोधिरत्न शिव
श्रीरत्नाकर ! मंगलैक निलय ! श्रेयस्कर प्रार्थये ॥२५॥

"आदर्श बन के जाना"

दुनियां म म्राक प्यार, गुणवान बन के जाना ।
इन्सान बन के आया भगवान बन के जाना ॥ ध्रुव ।
महमान हो दिनों का, आया यहाँ तू बनकर ।
सबका सदा भला कर उपकार करके जाना ॥१॥
मधय धारे आये लालच भले दिखाये ।
फिर भी सुमाग से तुम न कदम को हटाना ॥२॥
सुख दुःख समान सहना जग में अलिप्त रहना ।
अपने ही मन को अपने—निजरूप में रमाना ॥३॥
वाणी ^ सच्चा रखना जीवन को अच्छा रखना ।
यूं आदर्श बन के जाना ॥४॥

मन्त्र एव प्रार्थना

सव धम समन्वय

मन्त्र— 'ॐ' ।

नित्य पाठ—ईशावास्य मिद सव, यत किंच जगत्या जगत ।
तन त्यक्तेन भु जीथा मा गध कस्यस्विदधनम ॥१॥

प्रात स्मरणम —प्रात स्मरामि हृदि सस्फुरदात्म-तत्वम्
सत चित सुख परम हस-गति तुरीयम् ।
यत स्वपन जागर-सुषुप्तमवति नित्यम
तद् ब्रह्म निष्क म ह न चमूत सघ ॥२॥

प्रातर भजामि मनसा वचसा मगम्यम
वाचा विभन्ति निखिलायदनुग्रहेण ।
यन् नेति नेति वचनर निगमा अवो चुस्
न देव-देवम जम च्युत माहु रग्नम् ॥३॥

प्रातर् नमामि तमस परमक-वणम
पूण सनातन-पद पुरुषोत्तमाख्यम् ।
यस्मिन् इद जगदशेषमशेष मूर्तौ
रज्जवा भुज गम इव प्रति भासित व ॥४॥

प्रार्थना

सबको सन्मति दे भगवान

सबको सन्मति द भगवान, सबको सन्मति द भगवान ।
ईश्वर अल्लाह तेरे नाम सबको सन्मति द भगवान ।

रघुपति राघव राजा राम, पतित-पावन सीता रा
शान्ति विधायक राजाराम, सब सुखदायक आत्मा र
अज अविनाशी राजाराम, स्वयं प्रकाशी सीतारा
ईश्वर अल्ला तेरे नाम सबको सन्मति दे भगवान

सर्व धर्म समानत्व (विनोबाकृत)

ॐ तत्सत् श्री नारायण तू, पुरुषोत्तम गुरु तू।
सिद्ध बुद्ध तू स्कन्दविनायक सविता पावक तू॥

ब्रह्म मज्द तू, यह्व शक्ति तू ईशु पिता प्रभु तू।
रुद्र, विष्णु तू रामकृष्ण तू, रहीम ताओ तू॥

वासुदेव गो विश्वरूप तू चिदानन्द हरि तू।
अद्वितीय तू अकाल निर्भय आत्मलिंग शिव तू॥

एकादशव्रत

अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य असंग्रह।
शरीरश्रम अस्वाद सर्वत्रभयवर्जन॥

सर्वधर्म समानत्व, स्वदेशी स्पर्श भावना।
विनम्र व्रत निष्ठा स, ये एकादश सेव्य है॥

—जैन धर्म—

मन्त्र १६वां णमो अरिहन्ताण, णमो सिद्धाण।
णमो आयरियाण, णमो उवज्झायाण।
णमो लोए सव्व साहूण॥

जैनी इसको नवकार महामन्त्र कहते हैं। १०८ मनकों की माला पर इसका जाप करते हैं।

प्रार्थना

महावीर प्रभु के चरणों में श्रद्धा के कुसुम चढ़ाय हम।
उनके आदर्शों को अपना, जीवन की ज्योति जगायें हम॥

— 'अकम्प'

तपसंयम मय शुभ साधन से आराध्यचरण आराधन से।
बनमुक्त विकारों से सहसा अब आत्म विजय कर पायें हम।१।
दृढ़ निष्ठा नियम विधान में रत प्राणबली प्रण पालन में।
मंजुल मनोरथ हो ऐसा कायरता कभी न लायें हम।२।
रस लोलुपता पद लोलुपता न सताये कभी विकार व्यथा।
निष्काम स्व पर कल्याण काम जीवन अर्पण कर पायें हम।३।
गुरुदेव शरण में लीन रहें, निर्भीक धर्म की बाट बहें।
अविचल दिल सत्य अहिंसा का, दुनिया को सुपथ दिखायें हम।४।
प्राणी प्राणी सह मैत्रि रखें, ईर्ष्या मत्सर, अभिमान तजें।
कथनी करनी इकसार बना 'तुलसी' तेरा पथ पायें हम।५।

—सनातन धर्म—

मंत्र—ओ३म् भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥

यह गायत्री मंत्र है। वैदिक इसका १०८ मनकों की माला पर जाप करते हैं। सनातन, वैष्णव, शैव, वैदिक आदि अनेक शाखायें होने से निम्नलिखित अनेकों मंत्र जाप के उपयोग में आते हैं।

'ॐ ॐ' "सोऽहम्" "ॐ नमो भगवते वासुदेवाय"
ॐ हनुमते नमः" 'ॐ दुर्गाय नमः" "राम राम"
"ॐ शिव, ॐ शिव" 'ॐ शान्ति शान्ति शान्ति'।

प्रार्थना

ॐ जय जगदीश हरे ! स्वामी जय जगदीश हरे।
भक्तजनों के संकट क्षण में दूर करे-ॐ-ध्रुव—
जो ध्यावे फल पावे दुःख विनशे मनका
सुख सम्पति घर आवे कष्ट मिटे तनका ॥

मात पिता तुम मेरे शरण ग्रहूं किसकी।
तुम बिन और न दूजा आश करूँ जिसकी ॥
तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तर यामी।
पार ब्रह्म परमेश्वर तुम सबके स्वामी ॥

तुम करुणा के सागर तुम पालन कर्त्ता।
मैं मूरख, खल कामी कृपा करो भर्ता ॥
तुम हो एक अगोचर सब के प्राण पति।
किस विधि मिलूं गुसाईं, तुम को मैं कुमति ॥

दीन वन्धु दुख हर्ता, रक्षक तुम मेरे।
अपने हाथ उठावो, शरण पडा तेरे ॥
विषय विकार मिटाओ पाप हरो देवा।
श्रद्धा भक्ति बढावो सन्तन की सेवा ॥

बौद्ध धर्म

मन्त्र—"बुद्ध सरण गच्छामि धम्म सरण गच्छामि संघ सरण गच्छामि"।

बुद्ध को मानने वाले १०८ मनकों की माला पर इसे जपते हैं।

प्रार्थना

या च बुद्ध व धम्म च, संघ च सरण गतो।
चत्तारि अरिय सच्चानि सम्मप्पञ्ञाय पस्सति ॥१॥
दुक्ख दुक्खसमुप्पाद, दुक्खस्स च अतिक्कम।
अरिय चट्ठङ्गिक मग्ग दुक्खूपसम गामिन ॥२॥
एत खो सरण खम एत सरण मुत्तम।
एत सरणमागम्म सब्ब दुक्खा पमुच्चति ॥३॥

जो आदमी बुद्ध की धर्म की और संघ की शरण में आता है वह सम्यक ज्ञान से चार आर्य सत्यों को जान लेता है ॥१॥ आर्य सत्य हैं—दुःख, दुःख का हेतु, दुःख से मुक्ति, और दुःख से मुक्ति की ओर ले जाने वाला अष्टांगिक मार्ग ॥२॥ इसी मार्ग की शरण लेने से कल्याण होता है। यही शरण उत्तम है। इसी शरण में आकर मनुष्य सभी दुःखों से छुटकारा पा जाता है ॥३॥

सिक्ख धर्म

मन्त्र १—ॐकार गनिनामु करता पुरखु निरभउ।

निरवैर अकाल मूरति अजूनी सभं गुरप्रसादि ॥

सिक्ख लोग इसको मन मन्त्र मानते हैं। १०८ मनके की माला जपते हैं। कोई कोई "ॐ सतनाम वाह गुरु" इसका भी जाप करते हैं।

प्रार्थना

गगन में थाल, रवि, चन्द दीपक बने, तारिका मंडल भाव मोती॥
धूपमलआनलो पवन चवरो करे सगल बनराइ फूलत जोती ॥१॥

कैसी आरती होइ भव खंडना तेरी आरती अनहता सब्द वाजत भेरी। ॥ध्रुवपद॥

सहस तव नैन नन नैन है तोहि कउ सहस मूरति नना एक तो ही।
सहस पद विमल नन एक पद गंध विन सहस तव गंध इव चलत मोही ॥२॥

सभ महि जोति जोति है सोई तिसदै चानणि सभ महि चानणु होई ॥
गुर साखी जोति परगट होई जो तिसु भावै सुआरती होइ ॥३॥

हरि चरण कमल मकरन्द लोभितमनो अनदिना मोहि आहिपियासा
कृपा जल देहि नानक सारिंग कउ, होइ जाते तेरे नाम वासा।
॥४॥

इस्लाम धम

मन्त्र—ला इलाह इल्लल्लाह
मुहम्मदुर रसूलिल्लाह ।।

इस मन्त्र को या 'अल्ला" शब्द को १०० मनको की तसबीह पर मुसलमान लोग जपते हैं।

कुरान से प्राथना

पनाह

आऊज बिल्लाहि मिनश शैत्वा निर रजीम ।।

अल् फातिहा

बिस्मिल्लाहिर रह्मानिर रहीम।
अल् हम्दुलिल्लाहि रब्बिल् आल मीन।
अर रहमानिर रहीम मालिकि यौमिद्दीन।
ईयाक नअबुदु व ईयाक नस्तईन।
इह् दिनस सिरा तल मुस्तकीम।
सिरातल लजीन अन अम्त अलहिम,
गरिल मग जब अलहिम व लज्जुआल्लीन ।।

आमीन

"द्वय कनूत"

अल्ला हुम्मा इन्ना नस्ता ईनका
वनस्तख फीरोका व न मीनो [illegible]

व न तवक्कालू ग्रलेईदा व नू सुदनी ग्रलेदकुम खर ।।
वनस बुस्तवा वलानव कुमका वनाव लऊ व नतरुको ।।
मयिक्क चुरुका ।
ईया वना बुद वनवन सहनी बनम जूद ।
बई नयका नसा बनाफीदू वनजू राह्मतवा ।
वनम्मा आजाबका इना ग्राजाबका विल्लूकारी मूलहिक ।

ग्रल्लाह के पगाम

कान्अन्नासु उम्मतं वाहिदतन्—सभी इन्सान एक कौम के हैं।
हल जजाग्रुल् इह मानि इहलल् दहसानु—
भलाई का बदला भलाई ही है।

व ला तक्तुलूग्र ग्रफमकुम्—
खून न करो ग्रापस में फूट मत डालो।
व यह प्ताग्रक्रूकर्जहुम—अपनी इन्द्रियों का संयम करो।
व ग्रज्ननिब गौलज्जरि—झूठ जाने से बचो।
वला यग्तब 'बा ज़ुकुम बाज़न—
किसी की भी पीठ पीछे निन्दा न करो।
वन हिल्ल मुतफिफ फीन—
कम तोल माप करने वालों को सजा मिलेगी।
यह सबु ग्रन्नमान हू ग्रख्लदहू —
वह सोचता है कि दौलत उसे ग्रमर बना देगी।
कल्ला नयुम्बिजन्ने फिल्हुतमति—
लेकिन [illegible] जायेगे।

इन्नल मुबज़्ज़िरीन कानू इख्वानऽश्शयातीनि—
फ़ज़ूल खर्चीं करने वाले बेशक शैतानो के भाई हैं।
यमहक़ुल्लाहुर्रिबाऽ—
ब्याज (सूद) राशि को अल्लाह जड़ से साफ कर देता है।

इसाई धर्म

LORD'S PRAYER (प्रभु से प्राथना)

OUR father who art in heaven Hallowed be thy name Thy kingdom come Thy will be done, In earth as it in heaven Give us this day our daily bread And forgive us And lead us not into temptation But deliver us from evil For thine is the kingdom The power, and the glory For ever and ever

Amen (आमीन)

TEN COMMANDMENTS
दस सिद्धान्त

(i) I am the Lord the God thou shalt have none other gods but me
मैं तुम्हारा मालिक ईश्वर के समान हूँ मेरे में ही विश्वास करो किसी अन्य में नहीं।

(ii) Thou shalt not make to thyself any graven image nor the likeness of any thing that is in heaven above, or in the earth beneath or in the water under the earth Thou shalt not bow down to them nor worship them
मेरी कोई मूर्ति न बनाना न ही मेरी स्वर्ग से तुलना करना न ही धरती के ऊपर न ही पानी के अन्दर देखना। न ही पूजना न ही मानना।

(iii) Thou shalt not take the name of the Lord thy God in vain
बेकार कार्यों में मेरी उपासना मत करना।

(iv) Remember that thou keep holy the Sabbath day Six days shalt thou labour and do all that thou hast to do but the seventh day is the Sabbath of the Lord thy God
छुट्टी के दिन मुझे याद करो और छः दिन काम करो सातवें दिन ईश्वर प्रार्थना का है।

(v) Honour thy father and thy mother
अपने माता पिता की इज्जत करो।

(vi) Thou shalt do no murder
तुम किसी को हत्या न करो।

(vii) Thou shalt not commit adultery
तुम व्यभिचार मत करो।

(viii) Thou shalt not steal
तुम चोरी न करो।

(ix) Thou shalt not bear false witness against thy neighbour
अपने पड़ोसी के खिलाफ झूठी गवाही न दो।

(x) Thou shlat not covet thy neighbour's house, thou shalt not covet thy neighbour's wife, nor his servant nor his maid, nor his ox, his ass nor any thing that is his
पड़ोसी की सम्पत्ति, पत्नी, नोकर को ललचाई दृष्टि से न देखो।